पुरातत्त्व संग्रहालय

एक परिचय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

हरिद्वार- 249404 (उत्तराखण्ड)

संस्थापक
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
The Founder of Gurukula Kangri Vishwavidyalaya
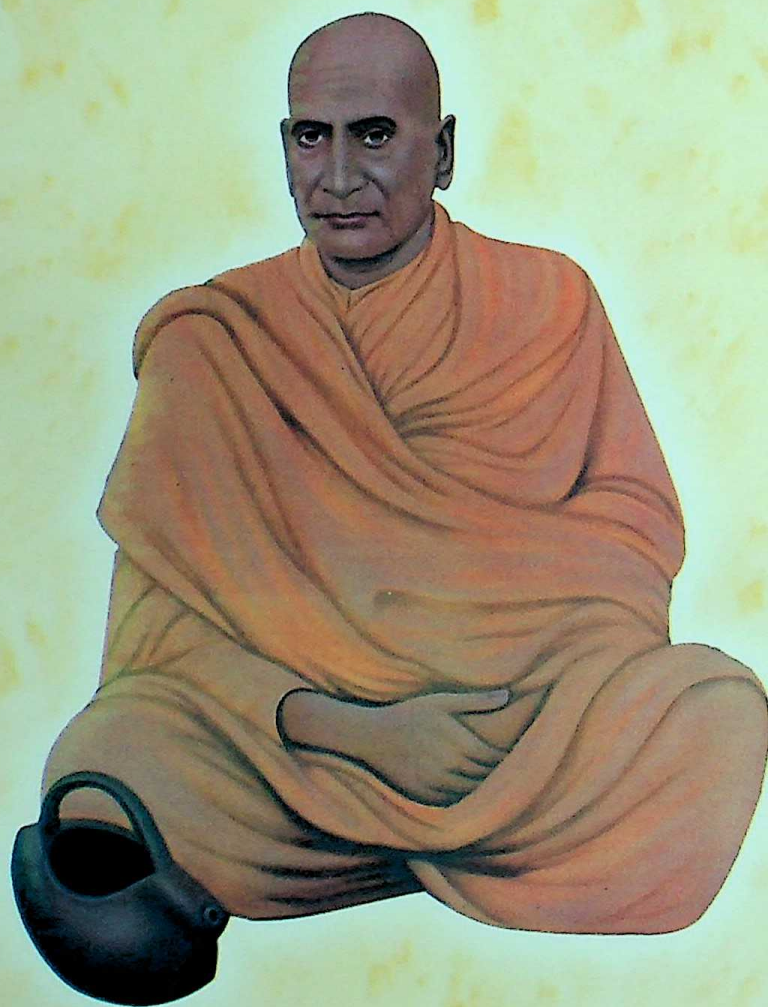
स्वामी श्रद्धानन्द जी
Swami Shraddhanand Ji
(सन् 1856 – 1926 ई०)

पुरातत्व संग्रहालय-एक दृष्टि में

1.	स्थापना वर्ष	-	1907 ई0
2.	वर्तमान स्थिति	-	संग्रहालय भवन, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय परिसर
3.	पिन कोड	-	249404
4.	दूरभाष	-	+91-1334-246078
5.	फैक्स	-	+91-1334-249233
6.	साप्ताहिक अवकाश	-	रविवार
7.	अन्य बन्द होने वाले दिवस	-	विश्वविद्यालय कार्यालय के अवकाश दिवस
8.	प्रवेश शुल्क	-	निःशुल्क
9.	नियंत्रण अधिकारी	-	निदेशक
10.	भ्रमण समय	-	सामान्य दिवस : पूर्वाह्न 10:00 बजे से अपराह्न 5:00 बजे ग्रीष्मकाल (15 मई - 30 जून) : प्रातः 7:00 बजे से 1:00 बजे दोपहर

आवरण मुख पृष्ठ
विविध आयुधों से युक्त
चतुर्भुजी विष्णु प्रतिमा (अष्टधातु)
18वीं शती० ई०

लेखक : प्रो० राकेश कुमार शर्मा (निदेशक एवं विभागाध्यक्ष)
मनोज कुमार (संग्रहाध्यक्ष)

प्रकाशक : निदेशक, पुरातत्त्व संग्रहालय,
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
फोन : + 91 - 1334 - 246078
फैक्स : + 91 - 1334 - 249233

मुद्रक : किरण ऑफसैट प्रिंटिंग प्रेस,
कनखल, हरिद्वार - 249404
फोन : + 91-1334 - 245975, 9837007222
E-mail : kiranpress@yahoo.co.in

वर्ष : सन् 2010
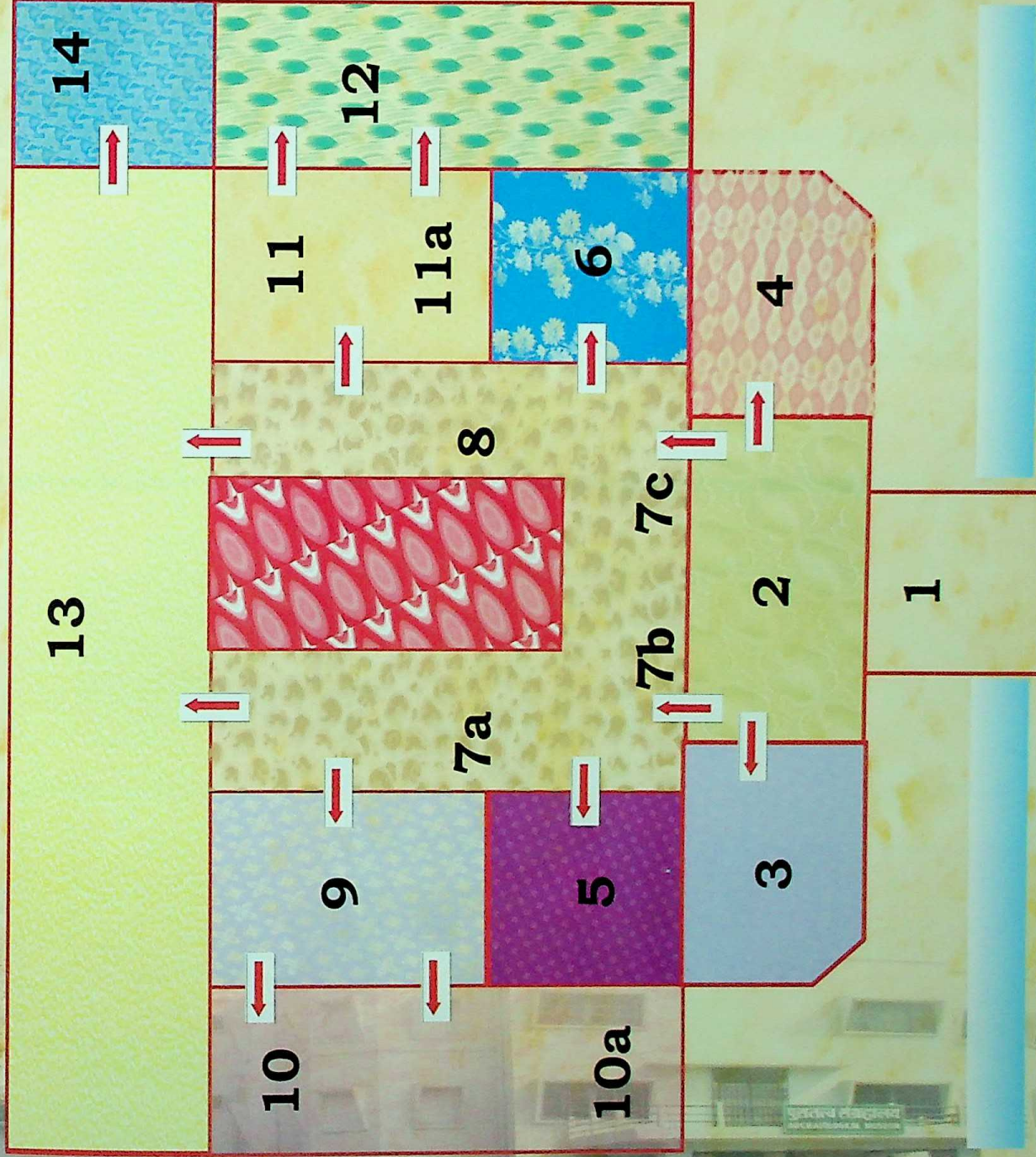
1. प्रवेश द्वार
2. स्वागत कक्ष
3. सीढ़ी
4. कार्यालय
5. निदेशक कक्ष
6. सहा0 क्यू0 व संग्र0 सहा0 कक्ष
7. आद्य ऐतिहासिक वीथिका
   7.अ. हडप्पा वीथिका
   7.ब. ताम्र निखात संस्कृति वीथिका
   7.स. चित्रित धूसर मृदभाण्ड वीथिका
8. मृण्मूर्त्ति वीथिका
9. स्वामी श्रद्धानन्द कक्ष
10. स्टोर
   10.अ. रासायनिक प्रयोगशाला
11. मुद्रा कक्ष
   11.अ. हिमालय दर्शन चित्र विथी
12. स्टोर
13. प्रस्तर कक्ष
14. सीढ़ी

संग्रहालय के नीचे के तल (भूतल) का मानचित्र (पैमाना रहित)

14. सीढ़ियां
15. अस्त्र-शस्त्र वीथिका
16. पाण्डुलिपि वीथिका
17. प्लास्टर कास्ट व विविध कक्ष
18. छाया चित्र व लघु चित्रकला विथिका
19. अष्ट-धातु वीथिका
20. क्यूरेटर कक्ष
21. कार्यालय
22. पुस्तकालय व शोध कक्ष
23. छज्जा
24. सीढ़ी
25. प्रो0 राकेश कुमार शर्मा कक्ष
26. पुस्तकालय
27. स्टोर
28. रेखांकित छायाचित्र व विविध कक्ष

संग्रहालय के उपर के तल का मानचित्र (पैमाना रहित)

विषय-सूची

प्रो० स्वतंत्र कुमार
कुलपति
गुरुकुल कांगड़ी वि०वि०, हरिद्वार

उत्तराखण्ड राज्य का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुरातत्त्व संग्रहालय हमारे गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार परिसर में स्थित है। इस संग्रहालय के निदेशक प्रो0 राकेश कुमार शर्मा एवं संग्रहाध्यक्ष श्री मनोज कुमार के द्वारा लिखित एक सुन्दर एवं रोचक मार्ग प्रदर्शिका एवं परिचायिका प्रकाशित की जा रही है जिससे प्राचीन भारत की संस्कृति के सुनहरे आयामों पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश पड़ेगा तथा इसमें वर्णित संग्रहालय संकलन - वैविध्य तथा भारतीय इतिहास की दृष्टि से सम्पन्न सामग्री के कारण सामान्य दर्शक से लेकर अनुसन्धात्मक दर्शक तक को लाभान्वित करेगा। मेरी कामना है कि यह संग्रहालय निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर होकर देश-विदेश के पुरातत्त्व संग्रहालयों में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना सके।

प्रो० ए० के० चोपड़ा
कुलसचिव
गुरुकुल कांगड़ी वि०वि०, हरिद्वार

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का संग्रहालय पुरातत्त्व, भारतीय संस्कृति और इतिहास की सुन्दर धरोहर है। इसका उद्घाटन प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डा0 वासुदेव शरण अग्रवाल ने किया था। प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू भी यहाँ पधारे थे और यहाँ के संग्रह से प्रभावित होते हुए अपने संग्रह से कुछ सामग्री इस संग्रहालय को भेंट स्वरूप प्रदान की थी। प्रस्तुत विवरण पुस्तिका में दी गई सामग्री से संग्रहालय का सजीव चित्रण प्रस्तुत होता है। यह पुरातत्त्व संग्रहालय भारत वर्ष की गौरवमयी अतीत के विभिन्न पक्षों को मूर्त रूप में प्रकट करता हुआ अपने संकलन के कारण पर्यटकों, कलामर्मज्ञों, इतिहास के जिज्ञासुओं के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। मैं संग्रहालय की उत्तरोत्तर प्रगति की कामना करता हूँ।

प्रो० महावीर
आचार्य एवं उपकुलपति
गुरुकुल कांगड़ी वि०वि०, हरिद्वार

शिक्षा प्रसार के साधनों में संग्रहालय का महत्वपूर्ण योगदान होता है। शिक्षित अथवा अशिक्षित दोनों ही वर्ग इसमें लाभान्वित होते हैं। तीर्थ स्थल होने के कारण भारत ही नहीं अपितु विश्व के विभिन्न भागों से हरिद्वार आने पर लोग इस संग्रहालय को भी देखने आते हैं और प्रदर्शित वस्तुओं को प्रत्यक्ष रूप से देखने से उनका ज्ञानवर्धन होता है तथा उनके सामने अपने सुनहरे अतीत की एक झाँकी प्रस्तुत हो जाती है। अत्यन्त हर्ष का विषय है कि संग्रहालय की नयी मार्ग प्रदर्शिका प्रकाशित की जा रही है जिसमें पुरावस्तुओं के साथ-साथ गढ़ी श्यामपुर नामक पुरास्थल तहसील ऋषिकेश, जिला देहरादून में संग्रहालय के निदेशक प्रो0 राकेश शर्मा तथा संग्रहाध्यक्ष श्री मनोज कुमार द्वारा किये गये उत्खनन से प्राप्त पुरावशेषों को भी प्रदर्शित किया गया है। इन पुरावशेषों से हरिद्वार व आस-पास की संस्कृति पर नवीन प्रकाश पड़ा है। आशा है कि यह संग्रहालय निरन्तर विकास की ओर अग्रसर होगा।

प्रो० राकेश कुमार शर्मा
निदेशक, पुरातत्व संग्रहालय
गुरुकुल कांगड़ी वि०वि०, हरिद्वार

मानव मन की एक प्रमुख विशेषता हैं कि वह अमूर्त्त से उतना प्रभावित नहीं होता जितना मूर्त्त से। संग्रहालय इसी अमूर्त्त को मूर्त्त बनाते हैं। यही कारण है कि मनोरंजन के साथ शिक्षा प्रसार के साधनों में संग्रहालयों को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। सम्भवतः इसी को ध्यान में रखकर कुलपिता स्वामी श्रद्धानन्द जी ने इस संग्रहालय की स्थापना की। संग्रहालयों में हमारी सांस्कृतिक सम्पदा एवं विरासत की धरोहर सुरक्षित है, जिसे संवारने, सजाने, सुरक्षित रखने और भावी पीढ़ी तक बचाकर पहुँचाने का दायित्व हम सब के कन्धों पर है। इस संग्रहालय के विषय में पर्यटकों एवं इतिहास जिज्ञासुओं को सामान्य जानकारी प्रदान करने के उद्देश्य से यह संक्षिप्त मार्ग प्रदर्शिका प्रकाशित की जा रही है। हमारी कामना है कि यह संग्रहालय राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी माननीय कुलपति प्रो0 स्वतन्त्र कुमार जी के आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन में एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करे।

पुरातत्त्व संग्रहालय की स्थापना, उद्देश्य एवं विकास

प्राचीन भारतीय संस्कृति के शिक्षा प्रसार के उद्‌देश्य में संग्रहालयों का योगदान महत्वपूर्ण होता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए लगभग एक शताब्दी पूर्व गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के आरम्भिक वर्षो में इसके संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने गुरुकुल कांगड़ी संग्रहालय की स्थापना सन् १६०७-०८ ई० में की थी। संग्रहालय की स्थापना के पीछे उस समय मूल भावना यह थी कि यह विद्यार्थियों के अध्ययन में सहायक हो तथा साधारण जनता में भी विभिन्न विषयों के प्रति रुचि के साथ-साथ भारत की प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर के प्रति रुझान उत्पन्न हो सके क्योंकि शिक्षा प्रसार के साधन के रूप में संग्रहालय की उपयोगिता प्रमाणित है। अनेक ग्रन्थों के पढ़ने के बाद जो विद्या उपार्जित की जाती है, थोड़े ही समय में उसका सामान्य ज्ञान संग्रहालय बड़ी सुगमता से करा देता है। बच्चों के मनोरंजन तथा ज्ञान वर्धन के लिए तथा अशिक्षित जनमानस के मानसिक धरातल को ऊँचा और स्वस्थ बनाने के लिए भी संग्रहालय की उपयोगिता सर्वमान्य है। इस संग्रहालय के प्रारम्भिक संग्रह में प्रथम विश्व युद्ध में मद्रास के तट पर जर्मन युद्धपोत एमडन द्वारा की गई गोलाबारी के कुछ अंश थे। इसी समय श्री एफ० टी० ब्रुक्स तथा श्री सी० एफ० एन्ड्रूज़ ने समुद्री वस्तुओं के कुछ नमूने भेंट किये। सन् १६११ ई० में गुरुकुल के उपाध्याय श्री महेश चरण सिन्हा के निर्देशन में यहां के विद्यार्थियों ने टेलीफोन का एक सुन्दर मॉडल बनाकर संग्रहालय को भेंट किया। संग्रहालयों का मुख्य कार्य संग्रह, प्रदर्शन तथा संरक्षण है जिसमें गुरुकुल संग्रहालय को
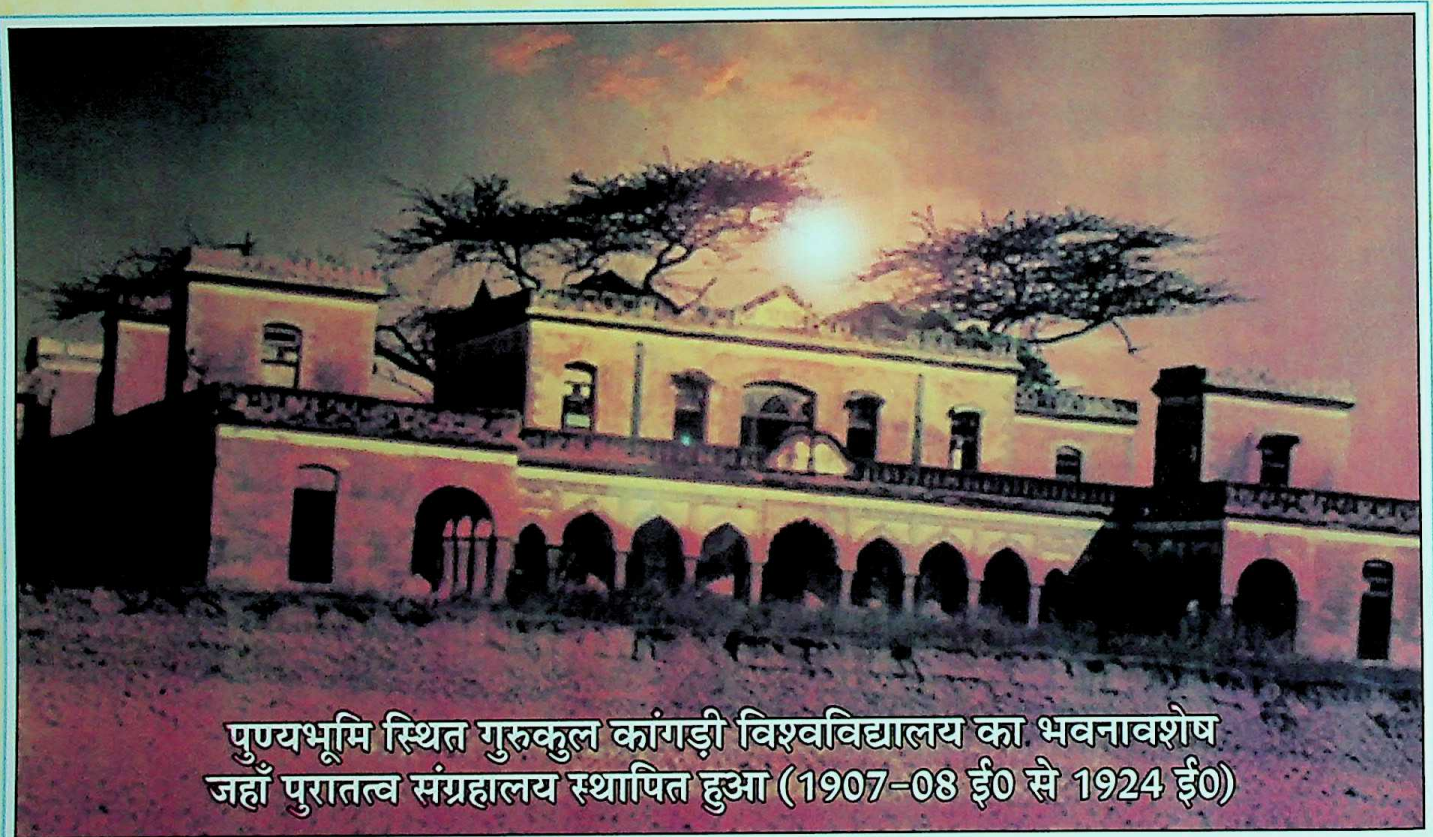
पुण्यभूमि स्थित गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का भवनावशेष
जहाँ पुरातत्व संग्रहालय स्थापित हुआ (1907-08 ई0 से 1924 ई0)

आरम्भिक वर्षो में अपूर्व सफलता प्राप्त हो रही थी। सन् १६२४ ई० तक संग्रहालय में अच्छा संग्रह हो गया था, किन्तु उसी वर्ष गंगा की भीषण बाढ़ में संग्रहालय की अधिकांश वस्तुएं नष्ट हो गई। अतः इसकी उपयोगिता को समझते हुए सन् १६४५ ई० में संग्रहालय का पुनर्गठन किया गया तथा ऐतिहासिक वस्तुओं के संग्रह पर विशेष बल दिया गया।

भारत में संग्रहालयों की संख्या तथा उनकी उत्तरोत्तर उन्नति की दृष्टि से आजादी के पूर्व से ही ध्यान दिया जा रहा था जिसका श्रेय अविभाजित उत्तर प्रदेश के विद्वान पूर्व शिक्षा मंत्री डा० सम्पूर्णानन्द जी को जाता है जिन्होंने सन् १९४७ ई० में इस प्रदेश के सार्वजनिक संग्रहालयों की दशा सुधारने एवं उनमें वृद्धि करने के उद्देश्य से एक संग्रहालय समिति की स्थापना की थी। समिति ने इस प्रदेश के जिन नगरों में नये संग्रहालयों की स्थापना की सिफारिश की थी उसमें एक हरिद्वार भी था। यह नगर हिन्दुओं के मुख्य तीर्थ स्थलों में से एक है। प्रति वर्ष यहाँ भारत ही नहीं बल्कि विश्व के कोने-कोने से बड़ी संख्या में लोग आते हैं, कुम्भ तथा अर्द्धकुम्भ के अवसर पर इन दर्शकों की संख्या बहुत अधिक हो जाती है। सौभाग्य से हरिद्वार की मुख्य शिक्षा संस्था गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय ने भी अपने यहाँ के वेद मंदिर में सन् १९४५ में संग्रहालय का पुनर्गठन किया तथा ऐतिहासिक वस्तुओं के संग्रह पर विशेष बल दिया जाने लगा। इस संग्रहालय की स्थापना को उत्तर प्रदेशीय सरकार ने भी मान्यता दी है। अतः पुनः इसी क्रम में संवर्द्धन करके सन् १९५० ई० में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्वर्ण जयन्ती समारोह के अवसर पर वेद मंदिर में वर्तमान संग्रहालय जिसमें आरम्भ में सिर्फ मूर्तिकला विभाग, चित्रकला विभाग, सिक्कों का विभाग तथा विविध वस्तुओं के विभाग था, का उद्घाटन करते हुए प्रसिद्ध कला इतिहासवेत्ता स्व० डा० वासुदेव शरण अग्रवाल ने इस संग्रहालय के उज्जवल भविष्य की कामना की थी। कालांतर में पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति, पं० सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार तथा पं० धर्मपाल जी विद्यालंकार की प्रवल प्रेरणा से इसके विकास में बड़ा सहयोग मिला।

सन् १९७१ ई० में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के कुलपति श्री रघुवीर सिंह जी शास्त्री के प्रेरणात्मक उत्साह से संग्रहालय के कार्य-कलापों में चेतना जागृत हुई। संग्रहालय को विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग का अंग बना दिया गया। इस विभाग के अध्यक्ष संग्रहालय के पदेन अध्यक्ष नियुक्त किये गये। संग्रहालय को उसी की व्यापक नीतियों में परामर्श देने के लिए माननीय कुलपति जी की

वेद मन्दिर जहाँ 1950 ई0 में पुरातत्व संग्रहालय का उद्घाटन हुआ।
(1950-1981)

अध्यक्षता में ''संग्रहालय परामर्श समिति'' गठित की गई। स्वामी ओमानन्द जी महाराज, डा० नीलकंठ पुरुषोत्तम जोशी, अध्यक्ष राज्य संग्रहालय लखनऊ तथा डा० उदयवीर सिंह, अध्यक्ष प्राचीन भारतीय इतिहास तथा पुरातत्त्व विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय इस के सदस्य मनोनीत किये गये। इसके बाद से संग्रहालय के वर्तमान कर्मचारियों ने पूर्ण निष्ठा और लगन के साथ इसे नूतन और भव्य स्वरूप देने का कार्य प्रारम्भ कर दिया है। इस प्रसंग में यह बात उल्लेखनीय है कि भारत सरकार की सहायता से संग्रहालय के लिए जो सुन्दर और विशाल भवन बनाया गया है, उसमे बहुत सी वस्तुयें जो स्टोर में थीं, उन्हें वर्गीकरण करके प्रदर्शित किया गया है। इस प्रकार संग्रहालय को अपने वर्तमान नवीन भवन में स्थानान्तरित करने का कार्य सन् १९८१ ई० में ही पूर्ण हो सका। अल्पकाल में गुरुकुल संग्रहालय ने जो उन्नति की है उसकी सराहना देश के अनेक विद्वानों और पुरातत्त्व वेत्ताओं ने मुक्त कण्ठ से की है। तब से यह संग्रहालय निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर होकर देश-विदेश के पुरातत्त्व संग्रहालयों में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाने की ओर अग्रसर है। प्रति वर्ष धर्मपरायण यात्री हरिद्वार, पतित पावनी गंगा में स्नान करने आते हैं। उनके लिए यह संग्रहालय स्वस्थ मनोरंजन एवं ज्ञानवर्द्धन का महत्वपूर्ण साधन बन गया है। विद्यार्थियों तथा शिक्षित वर्ग की ज्ञान पिपासा की शान्ति के लिए इतिहास, पुरातत्त्व, अभिलेख शास्त्र, मुद्रा शास्त्र आदि की विविध सामग्री संग्रहालय में विद्यमान है। लगभग पूरे वर्ष दर्शकों की चहल-पहल से संग्रहालय भवन व्याप्त रहता है। पंचपुरी की विभिन्न शिक्षा संस्थाएं अपने छात्रों को क्रियात्मक ज्ञान देने के लिए गुरुकुल संग्रहालय का उपयोग कर रही हैं। देश के विभिन्न भागों से विशेषकर देहरादून, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, चण्डीगढ़, हरियाणा आदि की छात्र-मण्डलियाँ भी अपनी सरस्वती यात्राओं में इसे देखने के लिए प्रति वर्ष आया करती हैं।

सन् १९५२ ई० में गुरुकुल के पास ही बहादराबाद में खुदाई कराने वाले भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग के उत्खनन-शाखा के अधीक्षक डा० यज्ञदत्त शर्मा ने वहाँ से प्राप्त प्रागैतिहासिक अवशेषों को जब गुरुकुल के संग्रहालय में दिखाया तो उपस्थित लोगों की आस्था सहज रूप से ही अपनी प्राचीन संस्कृति में जागृत हो उठी। पुरातत्त्व, कला, संस्कृति तथा इतिहास आदि विषयों पर संग्रहालय द्वारा आयोजित व्याख्यानों में देश के जाने-माने विद्वान आमंत्रित किये जाते हैं।

इस संग्रहालय में स्थानीय कला को सुरक्षित रखने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। कनखल की अनेक हवेलियों पर १९वीं शती के रंगीन भित्ति चित्र हैं। इन चित्रों में कुछ ईस्ट इण्डिया शैली के हैं। चित्रों से यह स्पष्ट है कि इसका निर्माण बहुत कुशल हाथों से नहीं हुआ किन्तु फिर भी कहीं-कहीं उत्तम कला के दृष्टिगोचर चित्र होते हैं। राम अभिषेक, झूले की नारियां, राजाओं की शोभा यात्रा, समुद्रमंथन तथा राधा-कृष्ण के चित्रों में प्राचीन कांगड़ा शैली के कुछ तत्त्व पाये जाते हैं। गुरुकुल संग्रहालय ने इन भित्ति चित्रों के कुछ फोटो भी तैयार करवाये हैं। इस प्रकार भावी संतति के लिए एक लुप्त होती हुई कला को सुरक्षित रखने का प्रयास किया गया है। इस दिशा में एक रोचक शोध कार्य किया जा रहा है।

जहाँ तक भारतीय इतिहास एवं संस्कृति पर प्रकाश डालने वाली सामग्री का प्रश्न है, इस संग्रहालय में प्रागैतिहासिक अवशेष, विभिन्न कालों में निर्मित पाषाण तथा धातु प्रतिमाएं, विभिन्न सांस्कृतिक काल की मृण्मूर्तियां, कांगड़ा एवं नाथद्वारा शैली के चित्र कला, भारत की प्राचीनतम आहत मुद्राओं से लेकर स्वतंत्रता पूर्व तक देशी रियासतों के सिक्के, विभिन्न देशों के सिक्के तथा नोट, अस्त्र-शस्त्र तथा विभिन्न धर्मो से सम्बन्धित हस्त लिखित ग्रन्थ आदि संग्रहीत हैं। हरिद्वार के आस-पास एवं उत्तराखण्ड की संस्कृति से सम्बन्धित विविध प्रकार की सामग्री यहाँ उपलब्ध हैं। इनमें बहादराबाद की खुदाई में प्राप्त मृण्मूर्त्तियां, मंगलौर के निकट नसीरपुर से प्राप्त गंगाघाटी के ताम्र-निखात संस्कृति से संबंधित, कनखल के भित्ति-चित्रों की प्रतिकृतियां, हिमालय में पाये जाने वाले पत्थर तथा

देहरादून जिले के चकराता तहसील में निवास करने वाले जनजाति जौनसार बाबर के दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाली विविध प्रकार की सामग्री विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

एक समय इस संग्रहालय को देखकर प्रो० कृष्ण दत्त वाजपेयी ने निम्न विचार प्रकट किया -

''अल्पकाल में ही इसका जैसा रूप बन गया है, वह इसकी भावी उन्नति का द्योतक है।''

उन्होंने संग्रहालय विशेषांक 'प्रह्लाद' नामक पत्रिका में भी संग्रहालय के विषय में निम्न विचार व्यक्त किये हैं

''उत्तर प्रदेशीय सरकार ने हाल में प्रादेशिक संग्रहालय निर्माण की जो महत्त्वपूर्ण योजना बनायी है उसकी पूर्ति की ओर गुरुकुल संग्रहालय अग्रसर है। आशा है कि शासन एवं जनता के सहयोग से उत्तराखण्ड के सम्बन्ध में पुरातत्त्व, नृतत्व, चित्रकला आदि की यथेष्ठ सामग्री इस संग्रहालय में शीघ्र संकलित हो सकेगी, जिसके द्वारा विशेषकर इस प्रदेश के अज्ञात इतिहास पर बहुत कुछ प्रकाश पड़ सकेगा।''

संग्रहालय को आज के वर्त्तमान समृद्ध स्वरूप में प्रतिष्ठित कराने में जिन यांग्य एवं विद्वान निदेशकों का विशेष योगदान रहा है उनमें प्रमुख हैं - श्री हरिदत्त वेदालंकार, डा. राजगोपाल अययर। प्रो. बी.सी. सिन्हा, डा. जबर सिंह सेंगर, प्रो. श्यामनारायण सिंह। जिनके पदचिन्हों पर आज भी संग्रहालय प्रगति पथ पर अग्रसर है। वर्तमान कुलपति माननीय प्रो० स्वतंत्र कुमार जी के कार्यकाल में पुरातत्त्व संग्रहालय में न केवल नई वीथिकाओं का निर्माण किया गया बल्कि पूर्व की विथिकाओं का भी पुर्नगठन हुआ है जिससे इस संग्रहालय को आधुनिक स्वरूप में लाने का भी गौरवपूर्ण कार्य का सम्पादन किया गया है। हमें आशा ही नहीं वरन् पूर्ण विश्वास है कि शीघ्र ही यह संग्रहालय देश के एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संग्रहालय के रूप में विकसित हो जाएगा। वर्तमान समय में संग्रहालय निम्न दो उद्देश्यों को ध्यान में रखकर निरंतर प्रगति की ओर अग्रसर है -

१- भारतीय इतिहास एवं संस्कृति पर प्रकाश डालने वाली सामग्री का संग्रह, प्रदर्शन और परिरक्षण करना जिससे कि विश्वविद्यालय के विद्यार्थी तथा जनमानस के साथ-साथ भावी पीढ़ी भी अपने देश के गौरवशाली अतीत से सम्बन्धित इतिहास एवं उसकी संस्कृति से भलीभांति परिचित हो सकें।

२- अपने आस-पास के प्रदेश, विशेष रूप से उत्तराखण्ड की पुरास्थलों का अन्वेषन व उत्खनन कर उससे प्राप्त वस्तुओं का संग्रह करना तथा संग्रहालय में प्रदर्शित करना। इसी क्रम में संग्रहालय के द्वारा उत्तराखण्ड राज्य के हरिद्वार तथा देहरादून जिलान्तर्गत दो प्रमुख पुरास्थलों का यथाः अजमेरीपुर तथा गढ़ी श्यामपुर का उत्खनन का गौरवमय तथा अनुसंधानात्मक कार्य किया गया जिससे उपरी गंगाघाटी की संस्कृति पर महत्वपूर्ण प्रकाश पडा है। उपरोक्त सामग्री के अतिरिक्त विभाग द्वारा पूर्व में किये गए अन्य अन्वेषण से प्राप्त पुरावस्तुओं तथा पतित-पावनी गंगा के दृश्यों से युक्त छायाचित्रों से युक्त एक नवीन पृथक् वीथी का निर्माण का कार्य प्रगति पर है।

पुरातत्व संग्रहालय भवन (1981 से)
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

आद्यऐतिहासिक वीथिका

इसमें हड़प्पा-संस्कृति, ताम्र-निखात संस्कृति और चित्रित धूसर मृदभांड संस्कृति से सम्बन्धित पुरावशेषों को प्रदर्शित किया गया है।

(क) सिन्धु सभ्यता वीथिका (२६०० ई०पू० से १६०० ई०पू०):-

हड़प्पा कालीन टेराकोटा की पुरावशेषों का शोकेस का छायाचित्र

इसमें लगभग पांच सहस्त्राब्दी पुरानी भारत वर्ष की ही नहीं अपितु दक्षिण एशिया की सबसे प्राचीनतम् सभ्यता से सम्बन्धित पुरावशेषों में मोहनजोदड़ो, हड़प्पा एवं कालीबंगा (राजस्थान) से उत्खनित पुरावस्तुएं व उनके कुछ प्लास्टर कास्ट में अनुकृतियाँ भी प्रदर्शित की गई है।

जहाँ मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा संस्कृति के अवशेष इस संग्रहालय को भारत सरकार के सौजन्य से प्राप्त हुए हैं वहीं कालीबंगा की सामग्री डा० योगानन्द शास्त्री (सम्प्रति विधानसभा अध्यक्ष दिल्ली सरकार) के द्वारा प्राप्त हुई है जो कालीबंगा उत्खनन स्थल पर इस विश्वविद्यालय द्वारा अध्ययन हेतु भेजे गये थे। मोहनजोदड़ो के पुरावशेषों में मृण्मूर्त्तियां, मृत्तिका पात्र, खिलौने आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। मिट्‌टी की मूर्तियों में मातृदेवी (**Mother Goddess**) की मूर्त्तियां अपना एक विशेष महत्त्व रखतीं हैं। यद्यपि कला की दृष्टि से ये महत्त्वपूर्ण नहीं है। इनके शरीर-सौष्ठव नहीं है। हाथ से डौलियाकर बनाए गये इन मूर्तियों के गले में हार है, आंखें और स्तन संभवतः अलग-अलग मिट्‌टी के टुकड़े चिपका कर बनाये गये हैं। परन्तु धार्मिक दृष्टि से इनका महत्त्व अवश्य ही रहा होगा क्योंकि ये मूर्त्तियां उपासना की दृष्टि से ही बनाई गई होंगी। मिट्‌टी के खिलौनों में विभिन्न पशुओं जैसे वृषभ तथा पक्षियों में बत्तख की आकृतियों के साथ-साथ पकी हुई मिट्‌टी के बने हुए साहुल, मृण बैलगाड़ी के नमूने, पहिये व मिट्‌टी की तकली आदि विवरण योग्य है। टेराकोटा के बने आभूषणों में मनके, अंगूठी, सम्पूर्ण चूड़ियां व उनके टुकड़े उल्लेखनीय है। अन्य टेराकोटा की वस्तुओं में चकतियाँ (त्रिभुजाकार, वर्गाकार व आयताकार), मुस्ठिका, एक टेराकोटा सीलिंग जिस पर हड़प्पा कालीन चित्रित लिपि में कुछ अक्षरों का अंकन है और स्लींग बाल्स का प्रदर्शन किया गया है। सिंधु सभ्यता कालीन कांचली मिट्‌टी की बने हुये कंगन व उसके टुकड़े के साथ-साथ मनके का भी प्रदर्शन किया गया है।

हड़प्पा कालीन प्रस्तर पुरावशेषों में विभिन्न प्रकार के मनके, स्लींग बाल्स, चर्ट के ब्लेड्स और परिपक्व हड़प्पा कालीन हड्‌डी के प्वांट्स तथा समुद्री सीप के कंगन तथा इनलेज को आकर्षक रुप में इस वीथिका में प्रदर्शित किया गया है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त धातु की वस्तुएँ, जिनमें ताम्र की छेनियाँ, भालाग्र और भारतीय लोटा व फ्राईपैन सदृश्य पात्र सम्मिलित हैं, को भी इस वीथिका में स्थान मिला है। एक धातु की छेनी पर परिपक्व हड़प्पा कालीन लिपि के कुछ अक्षरों का अंकन भी किया गया है।

कालीबंगा (राजस्थान) नामक स्थान से प्राप्त सामग्री भी इस वीथिका में प्रदर्शित की गई है। इसमें मृत्तिकापात्रों के टुकड़े, मिट्‌टी के खिलौनों का विवरण प्रासंगिक है। मिट्‌टी के बर्तनों का आकार तथा गोलाई आदि देख कर ऐसा प्रतीत होता है कि ये चाक द्वारा निर्मित हैं तथा नियंत्रित उच्च तापमान पर पकाये गये हैं। लाल रंग के बर्तनों के टुकड़ो पर काले रंग से किया गया रेखांकन भी विद्यमान है। मृत्तिकापात्रों के टुकड़ों पर सिन्धु सभ्यता की भांति ही काले रंग से रेखांकन किया गया है और मृत्तिकापात्र लाल रंग के हैं। खिलौनों की आकृति भी उक्त संस्कृति से साम्य रखती है। अतः ये वस्तुऐं निःसंदेह सिन्धु सभ्यता से सम्बन्धित हैं।

(ख) ताम्र-निखात संस्कृति खंड (२००० ई०पू०-१५०० ई०पू०) :-

हड़प्पा कालीन धातु की बनी वस्तुएँ

इस वीथिका में द्वितीय सहस्त्राब्दी ई०पू० में गंगा-यमुना के दोआब में फैली इस संस्कृति से सम्बंधित गेरूए रंग के मृदभांड के कुछ ठीकरे के साथ रूड़की के पास मंगलौर तहसील में स्थित नसीरपुर जिला-हरिद्वार से प्राप्त ताम्र के विभिन्न प्रकार के वस्तुओं के निखात जैसे- कांटेदार बर्छी (Hooked Spear) हार्पून्स, कुल्हाड़ी, बार सेल्ट, वाणाग्र तथा तलवार आदि ६ पुरावशेषों को शोकेस में प्रदर्शित किया गया है। इन वस्तुओं का प्रयोग तत्कालीन मानव अपनी प्रतिदिन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सम्भवतः औजार अथवा हथियार के रूप में करता था। इन्हें आरम्भ में ''गंगाघाटी के हथियार'' नाम से भी पुकारा जाता था। सर्वप्रथम तांबे से बने उपकरण गंगा-यमुना दोआब में स्थित विभिन्न स्थानों से मिले थे। कालान्तर में मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा आदि स्थानों की खुदाई में भी तांबे और कांसे से बने उपकरण मिले परन्तु दोनों में समानता नहीं है। संभवतः इसीलिए गंगाघाटी के उपकरणों के काल निर्धारण के विषय में विद्वानों में मतभेद रहा है। सर मार्टिमर व्हीलर के मत में ये उपकरण ८ वीं शताब्दी ई०पू० से पहले के होने चाहिये। प्रो० बी० बी० लाल के अनुसार ये उपकरण हड़प्पा संस्कृति के पश्चात् (Late Harappan Culture) के हैं क्योंकि इस प्रकार के उपकरण अधिकतर नारंगी अथवा गहरे लाल रंग के मिट्टी के पात्रों (Ochure colured pottery) के साथ मिले हैं जिनका समय १६ वीं शताब्दी ई०पू० प्रायः निश्चित हो चुका है।

(ग) चित्रित भूरे मृदभांड संस्कृति (११००ई०पू० - ७०० ई०पू०):-

एक अन्य पात्र परम्परा चित्रित घूसर मृदभाण्ड के अवशेष भी संग्रहीत हैं। जैसा कि नाम से विदित है ये धूसर या स्लेटी रंग के पात्र हैं जिन पर काले रंग से चित्रण है। अहिच्छत्र (१६४०) के उत्खनन से सर्वप्रथम ज्ञात इन पात्रों और संस्कृति का काल ई०पू० द्वितीय सहस्त्राबदी के आरंभ से लेकर ई०पू० प्रथम सहस्त्राब्दी के मध्य तक माना जाता है, इन पर अंकित आकृतियों में संकेन्द्रित वृत्त, अर्धवृत्त, तिरछी रेखाओं और सामूहिक बिन्दूओं की प्रमुखता है। महाभारत से संबद्ध कई स्थानों पर मिले इन पात्रों को एक विशेष प्रकार के कम तापमान के भट्टे में पकाया जाता था जिससे इनका रंग धूसर ही रहे।
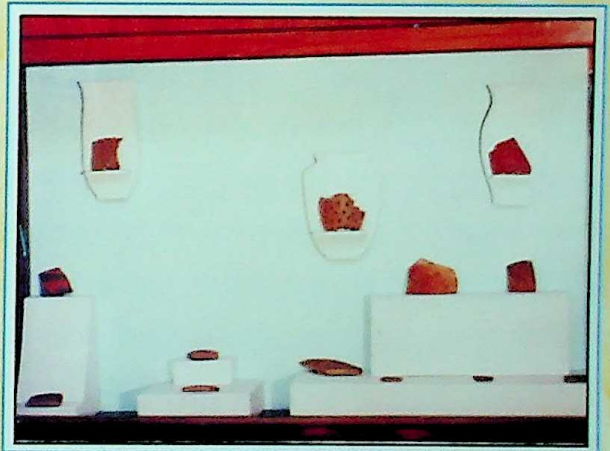
हड़प्पा कालीन मृदभाण्डों के टुकड़े

कुछ मृदभाण्ड अभ्रकमिश्रित मिट्टी से (Micaceous Red ware) से बनाये गये हैं और ये काले रंग से चित्रित हैं। एक मृदिकापात्र जिसका कोई आकार नहीं है, पर चित्रित एक मोटा घेरा, तीन पतले सफेद रंग घेरों से काटा गया है।

अहाड़ संस्कृति - राजस्थान में यह स्थान उदयपुर के निकट है। यहाँ पर श्री आर० सी० अग्रवाल ने उत्खनन किया था। इस उत्खनन के दौरान काले और लाल एवं सफेद चित्रित पात्र व Burnished लाल ये मृदिकापात्र कटोरे व घड़े के विभिन्न आकारों में हैं। इन पर सामान्यतः समानान्तर काले घेरे चित्रित हैं। यह तामपाषाणिक संस्कृति है जिसके कई चरण हैं, जो ई०पू० चतुर्थ सहस्त्राब्दी से लेकर ई०पू० द्वितीय सहस्त्राब्दी तक के हैं।

मृण्मूर्त्तिकला वीथिका

आवक्ष मातृदेवी प्रथम शती ई0 पू0, कौशाम्बी

हाल ही में दिल्ली विधान सभा के माननीय अध्यक्ष डा० योगानन्द शास्त्री द्वारा उद्घाटित यह वीथिका दर्शाती है कि गुरूकुल कांगड़ी संग्रहालय के विभिन्न संग्रहों में मृण्मूर्तियों का संग्रह विशेषरूप से महत्त्वपूर्ण है। इस संग्रहालय में विभिन्न स्थानों से प्राप्त मृण-मूर्तियों की संख्या लगभग ५०० है। स्थानक महत्ता के आधार पर यह संकलन मथुरा, कौशाम्बी एवं विदिशा से प्राप्त मृण्मूर्तियों का है। अगनई खेड़ा, शाहाबाद (हरदोई), आंवला (बरेली) एवं इमलीखेड़ा (हरिद्वार) व सरसावा (सहारनपुर) से भी कुछ मूर्तियों को संगृहीत किया गया है। अधिकतर मृण्मूर्तियाँ क्रय की गयी हैं। विदिशा (मध्य प्रदेश) से प्राप्त मृणमूर्तियाँ स्व० प्रो० कृष्णदत्त बाजपेयी के सौजन्य से उपलब्ध हुयी है। स्तरीय कालक्रम के अभाव में शैली के आधार पर ही इनका विभाजन किया गया है। संग्रहालय में मौर्यकालीन भूरे रंग की लगभग २५ मानवीय एवं कुछ पशु मूर्तियाँ है। कुछ मूर्तियाँ प्राक मौर्यकालीन प्रतीत होती हैं। अधिकतर मूर्तियों के निर्माण में साँचे का उपयोग मुखभाग बनाने में किया गया है। हाथ से बनी कुछ ही मूर्तियाँ हैं। मुखभाग में मिट्टी को ही उठाकर अथवा डौलियाकर नाक एवं दबे हिस्से में आँख बनायी गयी है। कानों में भारी कुण्डल एवं गले में हार अलग से चिपकाया गया है। छोटे-छोटे बिन्दुओं से मूर्ति को अलंकृत किया गया है। एक मृण्मूर्ति का कमर से नीचे का भाग टूटा हुआ है। कलश समान भारी उभरा वक्षःस्थल ममतामयी मातृदेवी की प्रजनन व पोषण दर्शाता है। द्वितीय मृण्मूर्ति का ऊपर का भाग टूटा हुआ है, कमर से नीचे के भाग में फैला हुआ वस्त्र एवं उस पर अलग से चिपकाई गयी सज्जित पट्टियाँ राज-शाही पोशाक का आभास दिलाती है। इस काल की द्वितीय वर्ग की मृण्मूर्तियों में मुखभाग साँचे द्वारा बनाया गया है। मुखभाग को हाथ से बने शरीर से चिपकाया गया है। इसे अलग से मिट्टी की पट्टियों से अलंकृत किया गया है। केशविन्यास को ठप्पे द्वारा बने फूल के द्वारा चित्रित किया गया है। मृण्मूर्तियों में भारी कुण्डल, गले का हार, बाजूबन्द एवं कमर में मेखला बनाई गयी है। इनको छोटे-छोटे बिन्दुओं या गोल अलंकरण या ठप्पे से सुसज्जित किया गया है। पशुआकृति में हाथी, घोड़ा एवं कुत्ता है। भूरे रंग की पशु मृण्मूर्तियों में विशेषतः हाथी छोटे बिन्दुओं एवं ठप्पे से अलंकृत किया गया है। अश्व एवं कुत्ता की मृण्मूर्तियों में आँखों को दर्शाने की कला के आधार पर ही इसे मौर्य कालीन वर्ग की मृण्मूर्ति माना गया है।

शुंगकालीन परम्परा में साँचे से बने मृणफलक हैं जिनमें मौर्यकालीन फूलों की सज्जा, केशविन्यास के साथ एवं भारी अलंकरण दर्शाये गये हैं। विविध युगलमिथुन संग्रहालय वीथिका में प्रदर्शित हैं। विशेष रूप से उल्लेखनीय मृण्मूर्तियों में से एक है जिसमें एक बैलगाड़ी अथवा रथ का भाग जिसमें दोनों ओर सुन्दर केशविन्यास से युक्त दो-दो पुरूष बैठे हैं जिनके मध्य में घट एवं खाने योग्य वस्तुयें रखी हैं। यह मृणमूर्ति साँचे से बनी हैं तथा

शीर्ष विहीन स्त्री प्रथम शती0 ई0 कौशाम्बी

झरोखे से देखती हुई प्रसन्नचित्त नारी
गुप्तकाल, कौशाम्बी

तत्कालीन आवागमन व्यवस्था को दर्शाती हैं। अठलड़ी माला पहने स्त्री प्रतिमा का वर्णन विशेषरूप से महत्त्वपूर्ण है। मूर्तियों का केशविन्यास, शारीरिक अनुपात अलंकरण और भाव भंगिमा दर्शकों को बरबस आकर्षित करती है।

कुषाणकालीन मृणमूर्तियों में अधिकतर शीर्ष के भाग हैं जिनमें बेलनाकार मिट्टी का शंकु (टेनन) लगा है जिससे उन्हे मुख्य खोखले शरीर से लगाया जाता था। खोखले, अनगढ़, भारी एवं कुछ बड़े आकार की मृणमूर्तियाँ इस काल की देन है। अलग से चिपकाई हुयी पट्टियों द्वारा सृजित हार, मेखला एवं अलंकरण बनाये गए हैं जिन पर ठप्पे से फूल के चित्र उत्कीर्ण किये गये हैं। नग्नता को भी दर्शाया गया है। सज्जा के लिये ठप्पे का उपयोग इसी काल की देन है। संग्रहालय के संकलन में कुषाणकालीन मूर्तियों में पैरों पर बैठी हुयी लक्ष्मी की मूर्ति है। दोनो हाथों में पुष्प हैं। इस मुद्रा में पत्थर पर भी मूर्ति उत्कीर्ण की गयी है। कुबेर की प्रतिमा भी यक्षपरम्परा की उत्कृष्ट कृति है। प्रमुख कुषाणकालीन मृण्मूर्तियों में पंखदार पगड़ी धारण किये पुरुष मस्तक, दोनों हाथ जोड़े पूजा भाव में पुरुष, लाल मिट्टी से निर्मित घुंघराले केश और गले में माला युक्त पुरुष मूर्ति, त्रिशूल धारणी देवी और माता शिशु की मूर्तियाँ दर्शकों को आकर्षित करती हैं। अन्य विशिष्ट कृति है 'हारिती' की मूर्ति जो सम्भवतः धार्मिक एवं रोगनिदान की देवी के रूप में पूजी जाती थी। इसके कई रूप मिलते हैं। संग्रहालय के संग्रह में जो मूर्ति है वह सीधे बैठी है, बायीं ओर गोद में बच्चा है एवं दायें हाथ में प्याला। गुप्तकालीन मृणमूर्तियों का अच्छा संकलन संग्रहालय में है, जो सौन्दर्य की दृष्टि से अधिक सुडौल और आकर्षक है। इनमें त्रिभागीय विभिन्न केश सज्जा दर्शनीय है जिसका वर्णन कालिदास ने भी अपने ग्रंथों में किया है। कुछ मूर्तियाँ त्रिभंग मुद्रा में साँचे में ढाली गयी है जो कला की सजीवता को दर्शाते हैं। स्त्री की मृण्मूर्ति जो एक वृत्त में बनी है, वृत्त का चित्रित भाग ईंट का खण्ड है। सुन्दर केशपाश, नुकीली नाक, अधखुली आँखें, उभरी ढोड़ी, एक सुन्दर मुख को प्रस्तुत करती है। वृत्त के आस-पास का भाग भी फूल-पत्तियों की चित्रकारी से सज्जित है। लाल रंग की यह मृण्मूर्ति कौशाम्बी के सर्वेक्षण से प्राप्त हुयी है। प्रस्तुतीकरण अन्य क्षेत्रीय स्थानों के समकालीन व मृणमूर्तियों के समरूप है। द्वितीय मूर्ति संभवतः उमा-महेश्वर की है जो कमनीय मुद्रा में है। सिर का भाग टूटा हुआ है। साँचे से निर्मित इस फलक में स्थानक शिव को दर्शाया गया है। उनके बायीं ओर पार्वती जंघा से सटी बैठी है जिसमें शिव बायें हाथ से पार्वती का आलिंगन कर रहे हैं। पार्वती के कानों में बड़े कुण्डल, गले में कण्ठाहार, सिर पर जूड़ा और हाथों में कंगन दर्शाये गये हैं। शारीरिक मुद्रा से एकाकार होने की आन्तरिक इच्छाभाव एवं लोकलज्जा की झिझक स्वतः इसमें प्रतीत होती है। संग्रहालय की यह एक दुर्लभ कृति है।

मध्यकाल की मूर्तियों में गुप्तकला का प्रभाव लक्षित होता है लेकिन समाप्त-प्रायः स्थिति में। शरीर सौष्ठव एवं अलंकरण में काफी परिवर्तन दिखायी देता है। बन्दर की विभिन्न प्रकार की मूर्तियाँ, तीन टांगों पर बैठी मानवीय मूर्ति एवं बैल जोड़ी तथा पशु इस काल में बनाये गये। कुछ मृणमूर्तियों के चेहरों पर पश्चिमी प्रभाव एवं वेशभूषा पर कम्पनीकाल का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

भारतीय मृणमूर्तिकला के लगभग सभी क्षेत्रों एवं कालों की मूर्तियों का संकलन संग्रहालय में है। मृणमूर्तियों के उचित प्रदर्शन हेतु संग्रहालय के केन्द्रीय कक्ष में मृणमूर्तियाँ प्रदर्शित की गयी है। इनके विशद् अध्ययन की आवश्यकता को भांपते हुए संग्रहाध्यक्ष के द्वारा मृण्मूर्तियों का विशद् अध्ययन का कार्य चल रहा है।

पाषाणप्रतिमा वीथिका

इस संग्रहालय में सुरक्षित पाषाण प्रतिमायें भी अन्य पुरातात्त्विक सामग्री की भाँति ही क्रय द्वारा, उपहार स्वरूप और पुरातात्त्विक सर्वेक्षण द्वारा संग्रहीत की गयी हैं। आजकल इस वीथिका में ३४४ प्रतिमायें संग्रहीत हैं। इन प्रतिमाओं में प्रथम शती ई० से आधुनिक काल तक की पाषाण प्रतिमायें हैं, लेकिन इनमें प्रमुख रूप से प्रथम शती ई० (कुषाणकाल) से १० वीं शती ई० तक की कलाकृतियों का बड़ा ही अनूठा संग्रह विद्यमान है। ये प्रतिमायें हिन्दू, बौद्ध तथा जैन धर्म से संबंधित हैं। इनका संग्रह मथुरा (उ० प्र०), शाहबाद (जिला हरदोई, उ० प्र०), कन्नौज (उ० प्र०), व उत्तराखण्ड राज्य के हरिद्वार जिले में स्थित कांगड़ी ग्राम, आमस्रोत, लालढ़ांग, पाण्डुस्रोत, झीवरहेड़ी, सुलतानपुर तथा हरिद्वार के समीपवर्ती क्षेत्रों से जैसे; मायापुर, श्रवणनाथमठ, हरकी पैड़ी क्षेत्र आदि स्थलों से किया गया है। हलांकि शुंग कालीन मथुरा कला का प्रतिनिधित्व करती वेदिका स्तम्भ पर अंकित शलभंजिका मूर्ति आनुपातिक शरीर सौष्ठव एवं भावभंगिमा की दृष्टि से उल्लेखनीय है।

हरिहर का शिरोभाग
पूर्व मध्यकालीन, कन्नौज

इन स्थानों से संग्रहीत प्रतिमाओं में मथुरा कला की ३८ प्रतिमायें क्रय की गयी हैं। ये उन दुकानदारों से क्रय की गयी हैं जो प्राचीन कलाकृतियों का संग्रह रखते हैं। ये प्रतिमायें कुषाणकाल से १०वीं शती ई० तक की हैं। इनमें अधिकतर कुषाणकालीन है। लाल चित्तिदार पत्थर पर उत्कीर्ण की गयी ये प्रतिमायें सौन्दर्य प्रदर्शन के अतिरिक्त भावभंगिमा तथा शिल्पकारिता की दृष्टि से उत्कृष्ट कला की परिचायक है। इन प्रतिमाओं में बुद्ध प्रतिमा, अभयमुद्रा में बुद्ध, बुद्ध का महापरिनिर्वाण, एकमुखी शिवलिंग, स्थानक पद्यहस्ता लक्ष्मी, सप्तमातृकायें, महिषासुरमर्दिनी, कुबेर और शुक क्रीड़ारत नारी आदि प्रतिमायें विशेषरूप से उल्लेखनीय है। शीर्षहीन बुद्ध की मूर्ति लगभग २२ से०मी० ऊँची तथा १५ से०मी० चौड़ी है। महात्मा बुद्ध वस्त्र धारण किये हुए अभय मुद्रा में दर्शाये गये हैं। बुद्ध को सर्वप्रथम पूर्णरूप से भारतीय रूप में चित्रित करने का श्रेय मथुरा के शिल्पियों को ही है। मथुरा के शिल्पकार बुद्ध की मूर्ति में सौन्दर्य के साथ-साथ उनके आध्यात्मिक भावों को भी प्रदर्शित करने में अत्यन्त सफल रहे हैं। गजलक्ष्मी की मूर्ति मथुरा के लाल पत्थर पर उत्कीर्ण तत्कालीन उत्कृष्ट कला का परिचायक है। स्तम्भ के सहारे खड़ी स्त्री की मूर्ति सम्भवतः यक्षिनी की ही है। आनुपातिक शरीर सौष्ठव एवं भाव भंगिमा की दृष्टि से यह मूर्ति दर्शनीय है। एक मुख शिवलिंग की मूर्ति अत्यन्त आकर्षक है। एक ही पत्थर पर लिंग के साथ ही जटाधारी शिव की मूर्ति उत्कीर्ण है।

इस संग्रहालय में उपरोक्त प्रतिमाओं के अतिरिक्त मथुरा कला की गुप्तकालीन पाषाण कलाकृतियाँ है। इस काल को भारतीय इतिहास में स्वर्णिम काल कहा जाता है और कला की दृष्टि से भी इस तथ्य की सत्यता सिद्ध होती है। पुनर्जागरण के इस युग में शिल्पी ने बाह्य सौन्दर्य के साथ आन्तरिक भावनाओं के प्रदर्शन पर अधिक बल दिया। इस काल की प्रतिमाओं में बुद्ध का शिरोभाग, बोधिसत्व का शिरोभाग और देवप्रतिमा आदि सुन्दर कलाकृतियों में विशेष स्थान रखती है। इस काल की सारनाथ कला में बुद्ध प्रतिमा भी महत्वपूर्ण कलाकृति है।

यहाँ ७वीं शती ई० से १०वीं शती ई० तक की मथुरा कलाकृतियों में बुद्ध प्रतिमा, विष्णु, शेषशायी विष्णु, आलिंगन मुद्रा में शिव-पार्वती और दुर्गाप्रतिमा भी पूर्वमध्यकालीन कलाकृतियों में विशेष स्थान रखती है। इस काल

की कन्नौज (उ०प्र०) से प्राप्त प्रतिमाओं में धर्मचक्र प्रवर्तन मुद्रा में पद्मासन बुद्ध की प्रतिमा की जिस पर ''ये धर्म हेतु प्रभवा.....'' बौद्धमंत्र उत्कीर्ण है, शैव और वैष्णव धर्मों की गुप्त काल से प्रारम्भ धर्म समन्वय की धारा को व्यक्त करती हरिहर का शिरोभाग, जिसके मुकुट के अर्द्ध भाग में किरीटधारी विष्णु और अर्द्ध भाग में जटाजूट धारी शिव है, की मूर्ति के अतिरिक्त विष्णु शीर्ष भी पाल-कालीन कला की महत्वपूर्ण कलाकृतियाँ हैं। यहाँ से प्राप्त पाल कला की इन कृतियों में हम गुप्तकालीन शालीनता और गतिशीलता का अनुभव करते हैं। चेहरे की बनावट, केश-विन्यास, होठों की रचना और उन पर अधखिली साधारण मुस्कान तथा अल्प-आभूषणों के चित्रण, गुप्तकाल की प्रत्यक्ष सीध में हैं।

अग्नि दिक्पाल के रूप में
पूर्वमध्यकालीन, पुण्यभूमि, हरिद्वार

इन प्रतिमाओं के अतिरिक्त पाण्डुस्रोत, लालढांग, झींवरहेड़ी, सुलतानपुर, कांगड़ी ग्राम, आमस्रोत तथा हरिद्वार क्षेत्र के समीपवर्ती क्षेत्रों से समय-समय पर किए गए पुरातात्विक सर्वेक्षण के द्वारा अन्य पुरातात्विक सामग्री की भाँति पाषाण प्रतिमाएँ भी संग्रहीत की गयी हैं। ये प्रतिमाएँ जहाँ उत्तराखण्ड का इतिहास बताती हैं, वहीं यह भी प्रतिपादित करती हैं कि इस क्षेत्र में विभिन्न कालों में बसने वाले लोगों के रीति-रिवाज क्या थे और उनके धर्म, विश्वास तथा विचार किस प्रकार के थे? इन प्रतिमाओं से ज्ञात होता है कि किसी समय पूर्व मध्य काल में यहाँ बौद्धों का भी प्रभाव था। यहाँ जैन, शैव तथा हिन्दु धर्म से सम्बन्धित प्रतिमाओं का भी अच्छा संग्रह है। इस संग्रह में ८ वीं से १० वीं शती ई० तक की प्रतिमाएँ कला के क्षेत्र में अपना विशेष महत्व रखती हैं।

इस काल की गंगा नदी के पूर्वी तट अर्थात् बाएँ किनारे पर हरिद्वार नगर से लगभग ८-१० किलोमीटर दूर कांगड़ी ग्राम से प्राप्त ललितासनस्थ अग्निदेव जिसके सिर के दोनों ओर से अग्निज्वालाएँ निकल रहीं हैं, ललितासनस्थ ईशान, सिंहारूढ़ दुर्गा, आसवपायी कुबेर, सप्तमातृका और १०वीं शताब्दी की सर्पाविष्ठित पद्मपाणि शिव प्रतिमा जिनके गले में सर्पमाला, सर्प केयूर, सर्पभुजबन्द-सर्वत्र सर्प का तक्षण अतिभव्य और अलौकिक है, का चित्रण है आदि प्रतिमाएँ सुन्दर कलाकृतियाँ हैं और कला के क्षेत्र में अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखती हैं। भारतीय शिल्प में शिव का यह अंकन विरल ही मिलता है।

अलंकृत विष्णु प्रतिमा
पूर्व मध्यकालीन

कांगड़ी ग्राम से प्राप्त सप्तमातृकाओं की खण्डित प्रतिमा पूर्व मध्ययुगीन शिल्प की बहुत सुन्दर कृति है। यद्यपि सप्तमातृकाओं की कल्पना वैदिक है परन्तु इनका प्रथम मूर्तिकरण कुषाण काल में होता है। इस प्रतिमा में केवल दो ही मातृकायें विद्यमान हैं। तीसरी के हाथ में गदा है जो वैष्णवी का सूचक है, इससे पूर्व की मातृका अपने वाहन मोर के आधार पर कौमारी है तो प्रथम देवी की गोद में शिशु की उपस्थिति माहेश्वरी की द्योतक है। यहाँ कुबेर की बहु संख्यक प्रतिमायें हैं जिसमें कांगड़ी ग्राम से प्राप्त आसनस्थ कुबेर प्रतिमा जिनके दाहिने हाथ में सुरापात्र है और बायें

हाथ से बायें खड़ी सुराघट लिए रमणी को आकर्षित करना चाहते हैं। वह स्पष्टतया आभंग मुद्रा में संकोचवश वायजंघा की ओर झुकी हैं। यह भाव भारतीय मूर्ति शिल्प में असाधारण है। इनके अतिरिक्त महिषासुरमर्दिनी की प्रतिमायें विशेष रूप से आकर्षण का केन्द्र है।

चतुर्भुजी स्थानक ब्रह्मा
पूर्वमध्यकालीन, मायापुर, हरिद्वार

सुलतानपुर के पूर्व में गंगा के किनारे प्राचीन टीलों की श्रृंखला है, जहाँ से चुतुर्मुखी विद्याधर या दिग्पाल और विष्णु व लक्ष्मी की प्रतिमाएं भी प्राप्त हुई हैं, जो इस क्षेत्र की सुन्दर कलाकृतियाँ हैं। यहाँ से निकट ही झींवरहेड़ी ग्राम से प्राप्त समुद्रमंथन का पाषाणफलक भी हरिद्वार क्षेत्र की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। यह फलक तो लन्दन में हुए भारत महोत्सव वर्ष-१९८२ में प्रदर्शित किया गया था। गुरुकुल तथा संग्रहालय के लिए यह बड़े गौरव का विषय रहा। लेकिन अपनी कुछ बूंद मात्र से हरिद्वार को कुम्भ नगरी की महत्ता प्रदान कर देनेवाले अमृतमय कुम्भ की उत्पत्ति के मिथक को प्रदर्शित करने वाला समुद्रमंथन फलक निःसंदेह इस संग्रहालय की अनुपम धरोहर है। इस फलक पर चाक्षुस नामक छठे मन्वंतर में घटित घटना का अंकन है, जिसके अनुसार दुर्वासा द्वारा श्रीहीनता के श्राप से मुक्त होने के लिए भगवान विष्णु के सुझाव पर देवताओं ने कच्छपावतार विष्णु को मंदराचल पर्वत की मथनी का आधार बनाकर और वासुकि नाग को नेती बनाकर अमृत और अन्य १३ अन्य रत्नों को प्राप्त करने के लिए समुद्र का मन्थन किया। इस फलक में वासुकी के पूंछ की तरफ देवता और फन की तरफ असुरों का अंकन हुआ है जो काफी सजीव है।

कांगड़ी ग्राम तथा आम्रस्रोत से पाँच जैन प्रतिमाएँ भी प्राप्त हुई हैं, जिनसे यह आभास ही नहीं, अपितु स्पष्टरूपेण ज्ञात होता है कि कभी यह क्षेत्र जैन धर्म का केन्द्र रहा होगा। इन प्रतिमाओं में सर्वतोभद्रिका प्रतिमा, जिसके चारो ओर ताकों में तीर्थंकर विराजमान हैं और आसन के नीचे उनके वाहन उत्कीर्ण हैं, शीर्षहीन महावीर, और जैन तीर्थकर की प्रतिमायें भी हरिद्वार क्षेत्र की महत्वपूर्ण कलाकृतियाँ हैं। इन प्रतिमाओं में सभी तीर्थंकर पद्मासन में दर्शाए गए हैं।

सर्वतो भद्रिका प्रतिमा
पूर्वमध्यकालीन, आमस्रोत
हरिद्वार

हरिद्वार और इसके समीपवर्ती स्थलों में श्रवणनाथ मठ, मायापुर और सतीकुण्ड आदि स्थानों से भी अनेक प्रतिमाएँ संग्रहीत की गई है। इन प्रतिमाओं में बुद्ध प्रतिमा, कुबेर, शिव-पार्वती और महिषासुरमर्दिनी आदि प्रतिमाएँ भी इस क्षेत्र की महत्वपूर्ण कलाकृतियाँ हैं। इन प्रतिमाओं को देखने से ज्ञात होता है कि यहाँ के कलाकार न केवल अंग-प्रत्यंगों के सुचारु प्रदर्शन में सिद्धहस्त थे, अपितु वे पृष्ठभूमिसंयोजन, अलंकरण तथा भावाभिव्यक्ति के भी मर्मज्ञ थे।

अन्त में कहा जा सकता है कि हरिद्वार क्षेत्र से प्राप्त ८ वीं शती ई० से १०वीं शती ई० तक की पाषाण प्रतिमाओं पर प्रतिहारकालीन कला का प्रभाव है। प्रतिहार काल में यहाँ परमपावन गंगा की उपत्यका में कतिपय देवभवनों का प्राचीन भारतीय स्थापत्य एवं शिल्प में अथवा स्वतन्त्र अस्तित्व रहा होगा।

मुद्रा वीथिका

धातु के एक निश्चित आकार के टुकड़े, जिनके भार एवं मूल्य की प्रामाणिकता किसी संगठन या सत्ता द्वारा की गई हो, सिक्के कहलाते हैं। सिक्कों का चलन मनुष्य की बदली आवश्यकताओं की आपूर्ति में विनिमय की कठिनाइयों का प्रतिफल है। उत्खनन एवं साहित्य के प्रमाणों के अनुरूप भारत में सिक्कों का प्रचलन अब से लगभग २५०० वर्ष पूर्व से हुआ। तब से निरन्तर ये प्रसरण में रहे हैं।

प्राचीन भारतीय इतिहास के निर्माण में भी इनका महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इनसे तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक दशा का अच्छा परिचय प्राप्त होता है। कभी-कभी तत्कालीन कला और साहित्य पर भी इनसे प्रकाश पड़ता है। प्राचीन भारतीय इतिहास में अनेक ऐसे स्थल हैं जिनकी जानकारी केवल सिक्कों के माध्यम से ही हुई है। राजनीतिक परिवर्तनों के साथ ही ये सिक्के विभिन्न नामों से पुकारे गये हैं, जैसे निष्क, शतमान, कृष्णाल, दीनार, मोहर एवं रुपया आदि।

वर्तमान समय में इस संग्रहालय की मुद्रावीथिका में विभिन्न धातुओं के ४०४३ सिक्के संग्रहीत किये गये हैं। इन सिक्कों को क्रय, उपहारस्वरूप तथा पुरातात्विक सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त किया गया है। इन सिक्कों में आरम्भिक आहत (पंचमार्क) मुद्राओं से लेकर अर्वाचीनकाल तक के सिक्के संग्रहीत हैं। इस समस्त संग्रह को चार उपविभागों में विभक्त किया गया है- प्राचीन, मध्य, वर्तमान और विदेशी। इनमें प्राचीन आहत मुद्राएँ पुरातात्त्विक क्षेत्र में विशेष महत्त्व रखती है क्योंकि यह अब तक के ज्ञात प्राचीनतम भारतीय सिक्के हैं। इस संग्रहालय में लगभग १३० आहत मुद्रायें संग्रहित की गयी है।

चन्द्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य) की स्वर्ण के अग्र एवं पृष्ठ भाग, गुप्तकाल

प्राचीनतम भारतीय मुद्रायें (ई० पू० ६०० से २०० ई०पू० तक) चांदी एवं ताम्र के विभिन्न आकारों की आहत मुद्रायें हैं। इन पर एक ओर सामान्यतः ५ चिन्ह हैं तथा दूसरी ओर एक से लेकर बारह तक चिन्ह हैं। इन्हें पण, पाद एवं मासक कहा गया। भार में एक पाद ५०.५२ ग्रेन तथा मासक २ या ३ ग्रेन होता था। इनमें प्रमुख आकार शलाका एवं प्याला प्रकार है, यद्यपि ये गोल, वर्गाकार, आयताकार आकारों में भी मिलते हैं। बढ़ती आवश्यकता के कारण शीघ्र ही आहत मुद्रायें सांचे से ढालकर बनायी जाने लगीं। इसी कोटि में ही आगे चलकर लेखविहीन तांबें के ढलुवाँ एवं जनपदीय सिक्के मिलते हैं।

छठी शती ई० पू० में उत्तर भारत में छोटे-छोटे राज्य स्थापित हो गये जिनके द्वारा चलाए गये सिक्कों पर ब्राह्मी भाषा में का नाम एवं राज्य के चिन्ह पृष्ठ भाग पर एवं पुरोभाग पर देवता की आकृति प्रदर्शित की गई। पाणिनि

(चौथी शती ई० पू०) ने भी अपने एक सूत्र में आहत कार्षापण का उल्लेख किया है। इन मुद्राओं को देखकर पाणिनि के ''रूपादाहत प्रशंसयोर्यप्'' सूत्र का अर्थ ठीक प्रकार से समझा जा सकता है।

यहाँ कुषाणकालीन सिक्के भी अपना विशिष्ट महत्त्व रखते हैं। भारत विदेशी आक्रमणकारियों के रूप में ग्रीक सीथियन, पार्सियन एवं कुषाणों के आगमन से सिक्के के निर्माण में निखार आया और सोने, चाँदी, ताँबे एवं मिश्रित धातुओं के सिक्के भी चलन में आये, जिन्हें क्रमशः स्टेटर, ड्रंकम, चेलकान एवं ओबोल नाम दिया गया। इन पर राजा की आकृति एवं लेख एक ओर और देवता दूसरी ओर उकेरे गये हैं। इस संग्रहालय में वीम कडफिसस, कनिष्क, हुविष्क और वासुदेव आदि कुषाण राजाओं के सिक्के संग्रहीत हैं। ये अधिकतर ताँबे के हैं जो तत्कालीन आर्थिक स्थिति के साथ-साथ प्रतिमा विज्ञान के भी सजीव प्रमाण हैं। यहाँ राष्ट्रकूट एवं यौधेयों के सिक्के भी दर्शनीय हैं।

भारत में गुप्तशासकों का समय सिक्कों के इतिहास में भी विभिन्नताओं और कारीगरी के लिए विशेष महत्त्व रखता है। यहाँ गुप्तकालीन स्वर्ण तथा रजत मुद्रायें सुरक्षित रखी गयी हैं जिनमें समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त, कुमारगुप्त और नरसिंहगुप्त आदि का नाम उल्लेखनीय है। इनमें से कई स्वर्ण मुद्रायें जो दुर्लभ हैं, प्लास्टर कास्ट में अपने वृहदाकार में दर्शकों को दिखाई गयी हैं जिससे तत्कालीन मुद्रा कला की उत्कृष्टता का परिचय प्राप्त हो सके। इसी उद्देश्य से उनके बड़े पट्टू (प्लेक) प्लास्टर-कास्ट के बनवा कर रखे गये हैं और ऐसे स्वर्णिम वर्ण के सुन्दर मुद्रा-निर्माताओं के विभिन्न रूपों में अंकित चित्र मनोहरी हैं। मोहम्मद हनीफ द्वारा बनाये गये बृहदाकार प्लास्टर-कास्ट अग्रलिखित गुप्त सम्राटों के हैं- १. वीणावादक समुद्रगुप्त, २.सिंहनिहन्ता चन्द्रगुप्त द्वितीय, ३. खड्गनिहन्ता कुमारगुप्त प्रथम, तथा ४. धनुर्धर चन्द्रगुप्त।

भारतीय-यवन, शक तथा गुप्तकालीन मुद्राओं के पृष्ठ भाग

इन सिक्कों को देखने से स्पष्ट होता है कि इस काल के शासकों ने सिक्कों से विदेशीपन मिटाकर भारतीय परम्परा के अनुसार ही बनवाया। इन सिक्कों में चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की धनुर्धर शैली की स्वर्ण मुद्रा और स्कन्दगुप्त की धनुर्धर शैली का ताम्र सिक्का भी दर्शनीय है। इस समय के सोने के सिक्के दीनार कहलाये, ये वजन में कुषाणकालीन सिक्के जैसे ही हैं। इस समय के चाँदी तथा ताँबे के सिक्के भी संग्रहीत हैं। इनमें से कुछ सिक्के वे हैं जो चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने पश्चिमी क्षत्रपों को हराने के बाद चलाये, जो आकार एवं माप में छोटे हैं।

संग्रहालय में कन्नौज और गुर्जर प्रतिहार राजाओं के सिक्के भी संग्रहीत हैं। यहाँ मध्यकालीन सिक्कों में वृषभ एवं अश्वारोही प्रकार के सिक्कों में, गुलाम वंश, खिलजी वंश तथा तुगलक वंश आदि के अनेक सिक्के संग्रह किये गये हैं। मुस्लिम सिक्कों पर अरबी भाषा में लेख अंकित किये गये हैं। जिनमें एक ओर राजा का नाम, टकसाल का नाम, अंकों एवं शब्दों में तिथियाँ तथा एक ओर कलमा मिलता है। इस प्रकार के मुस्लिम शासकों के कुछ नाम उल्लेखनीय हैं जिनकी मुद्राएँ तत्कालीन मुद्राकला की सम्यक् रूप हैं-

बलवन, अलाउद्दीन खिलजी, शम्शुद्दीन अल्तुतमिश, गयासुद्दीन तुगलक, मोहम्मद तुगलक, इस्लामशाह, मुबारकशाह, फिरोजशाह, बहलोलशाह, शेरशाह, अकबर, जहाँगीर आदि।

भारत के विविध युगों तथा प्रदेशों और गणतन्त्र में विलीन तत्कालीन रियासतों तथा शासनखण्डों के सिक्कों में कुछ उल्लेखनीय हैं- इन्दौर, गोरखपुर, कन्नौज, उदयपुर, मैसूर, ट्रावनकोर, सौराष्ट्र, गुजरात, बड़ौदा, नेपाल,

हैदराबाद, जोधपुर, देवास, झाँसी, मालवा, भरतपुर, नवानगर, पोरबन्दर, नाभा, रतलाम, मालेर कोटला, टिहरी, भोपाल, टौंक, बीकानेर, उज्जैन, जैसलमेर, पटियाला, चित्रकूट आदि।

यहाँ विश्व के कुछ देशों की भी मुद्राएँ संग्रह की गई हैं और वे संसार की मुद्राकला तथा उसके वैविध्य को एक ही स्थान पर प्रस्तुत करती है। उनमें से हैं ग्रेट ब्रिटेन, इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया, नीदरलैण्ड, न्यूजीलैण्ड, बोर्नियो, नार्वे,. संघाई, फ्रांसिसी, हिन्द-चीन, साइप्रस, ईरान, अफगानिस्तान, एशियाई टर्की, फिलिस्तीन, मिश्र, जापान, चीन, जर्मनी, हंगरी, बेल्जियम, पुर्तगाल, डेनमार्क, रूस, अमेरिका, मौरिशस, फ्रांस, टर्की, अर्जेंटीना, बलूचिस्तान (पाकिस्तान), यूनान, कनाडा, अफ्रीका, हालैण्ड, लेबनान, इण्डोचायना, कांगो, अबीसीनिया, पाकिस्तान, मलाया आदि।

भारतीय-यवन, शक तथा गुप्तकालीन मुद्राओं के अग्र भाग

इनके अतिरिक्त अनेक मुद्राएँ ऐसी भी हैं जो भारत में ब्रिटिश शासन के समय विदेशी शासकों, जैसे- विक्टोरिया, एडवर्ड, जार्ज आदि ने निर्माण कराके प्रचलित की थीं। ये अधिकतर ताम्र निर्मित हैं और अनेक मुद्राएँ बहुत साफ तथा सुन्दर दृश्यों से युक्त हैं। ये दर्शकों को भारत पर विदेशीसत्ता का स्मरण दिलाती हैं।

इन मुद्राओं के अतिरिक्त इस वीथिका में कुछ देशों के नोट (वित्तीय सामग्री के वर्ग में आने वाली वस्तुएं, जो आंग्ल भाषा में करेन्सी कहलाती है) भी प्रदर्शित किये गये हैं। संग्रहालय में संग्रहीत नोट मुख्यतया इटली, जापान, रूस, फ्रांस, हांगकांग, यूनान, थाईलैण्ड (स्याम), मौरिशस, अफगानिस्तान, जर्मनी, चीन, नेपाल आदि देशों के हैं।

संग्रहालय में डाक टिकटों के संकलन का भी अच्छा प्रयास किया गया है यहाँ के संग्रह में विदेशों के अनेक प्रकार के डाक टिकट हैं। इनमें संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोप तथा अफ्रीका के विभिन्न देशों के टिकटों को बड़ी संख्या में रखा गया है जिनमें कई प्राचीन तथा दुर्लभ डाक टिकटों के प्रतिनिधिस्वरूप में हैं।

इस प्रकार यहाँ मुद्राओं तथा नोटों का यह वृहद संग्रह, जहाँ मुद्राशास्त्र के ज्ञाताओं के लिए शोधकार्य में सहायक हैं, वहाँ जनसाधारण के लिए ज्ञानवर्धन और मनोरंजक भी है। प्रसिद्ध मुद्रा विशेषज्ञ डा० कृष्ण दत्त वाजपेयी ने यहाँ के मुद्रा कक्ष के बारे में लिखा है ''संग्रहालय में सिक्कों का विभाग भी दर्शनीय है। इस विभाग में प्रारम्भिक आहत सिक्कों से लेकर आर्वाचीन काल तक के सिक्के प्रदर्शित हैं। विदेशों के सिक्कों का भी अच्छा संकलन किया गया है। विभिन्न कालों के अनुसार सिक्के अलग-अलग रखे गये हैं।''

हिमालय दर्शन चित्रवीथिका

पुरातत्त्व संग्रहालय में हिमालय की प्राकृतिक सौन्दर्य के अवलोकनार्थ है हिमालय दर्शन चित्र वीथिका भी है। हिमालय पर्वत श्रृंखला सदियों से ही जहाँ भारतीय मनीषियों, तपस्वियों तथा योगियों की कर्म भूमि रही है वहीं विश्व के जिज्ञासुओं के लिए भी रहस्य एवं आकर्षण का केन्द्र भी रहा है। इसकी महिमा का वर्णन प्राचीन भारतीय साहित्य में है। यद्यपि वर्तमान वैज्ञानिक युग में यातायात की सुविधा के कारण हिमालय पर्वत श्रृंखला के प्राकृतिक सौन्दर्य को देख पाना सुगम हो गया है किन्तु सामान्य जनसाधारण के लिए आज भी यह कल्पना का ही विषय है।

हिमालय दर्शन चित्र वीथिका का एक झलक

हिमालय दर्शन का प्रारम्भ हरिद्वार से ही होता है। भारतीय पौराणिक आख्यानों में भगवान शिव से सम्बन्धित इस स्थान की महिमा का अभूतपूर्व विवरण है। हरिद्वार की महिमा इस तथ्य से भी द्विगणित हो जाती है कि भागीरथी हिमालय की घाटियों से होती हुई सर्वप्रथम हरिद्वार के मैदानी क्षेत्र में पदार्पण करती है। इसीलिये हरिद्वार को गंगाद्वार भी कहा जाता है। यात्रियों तथा पर्यटकों को हिमाच्छादित पर्वत श्रृंखला तथा गंगा के उद्‌गम स्थल गोमुख आदि के प्राकृतिक सौन्दर्य की अनुभूति के लिए विश्वविद्यालय के पुरातत्त्व संग्रहालय में ''हिमालय दर्शन चित्र वीथिका'' स्थापित की गयी है। विश्व विश्रुत योगी, योग गुरू तथा सिद्धहस्त चित्रकार स्वामी सुन्दरानन्द जी के

सहयोग और मार्ग दर्शन में यह चित्र वीथिका लगाई गयी है।

स्वामी सुन्दरानन्द सन्यासी रूप में वस्तुतः कर्मयोगी हैं। स्वामी तपोवनम्जी के शिष्य स्वामी जी सिद्ध, योगी, योग गुरू तथा भगवत प्रेमी होने के साथ-साथ अनुभवी पर्वतारोही, पर्यटक तथा सिद्धहस्त छायाकार भी हैं। वे गत ४५ वर्षो से गंगोत्री में तपोवन कुटी में वास करते हैं। यह कुटी उन्हें गुरूजी से विरासत में प्राप्त हुई। ६० वर्षीय स्वामी सुन्दरानन्द जी का जन्म ग्राम अनंतपुर, जिला नेल्लोर, आंध्र प्रदेश में हुआ था। बाल्यावस्था में ही सन्यास लेकर हठयोग और योग साधना द्वारा सिद्धि प्राप्त की।

योग शिक्षा के अतिरिक्त कुशल पर्वतारोही एवं पर्यटक के रूप में स्वामी जी हिमालय के जिन शिखरों को माप चुके हैं, उनमें जोकिन, गंगोत्री, कोटेश्वर, केदार डूम, चन्द्र पर्वत, भागीरथ पर्वत, कुमायूं नदी, नंदाखाट, बलजोरी तथा कब्रू (सिक्किम) उल्लेखनीय है। गोमुख से बद्रीनाथ मार्ग (१६५१० फुट उँचाई) को पुराणों में देव मार्ग कहा गया है। स्वामी जी ने इस मार्ग पर अनेक बार यात्रायें की हैं तथा वहाँ के शिखरों, हिमनदों और हिमागारों के मनोरम प्राकृतिक दृश्यों को अपने कैमरे द्वारा संजोया है। उनके ५० हजार रंगीन पारदर्शी संकलन में शिवलिंग, मेरू, सुमेरू, वासुकी, गोमुख तथा चतुरंगी पर्वत शिखर उल्लेखनीय हैं। स्वामी जी पारदर्शियों तथा चित्रों के माध्यम से दर्शकों को हिमालय दर्शन कराते हैं। स्वामी जी अनेक राष्ट्रीय संस्थाओं यथा चित्रकला संगम दिल्ली, आईफेक्स-दिल्ली, जहांगीर आर्ट गैलरी बम्बई, बिड़ला अकादमी आफ कलकत्ता, वर्ल्ड कल्चरल इंस्टीट्यूट बैंगलौर आदि में अपने पारदर्शियों का प्रदर्शन कर चुके हैं। स्वामी जी के चित्रों की भी अनेक प्रदर्शनियाँ लग चुकी हैं जिनकी देश की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। देश-विदेश के चित्रकारों तथा अनेक राष्ट्रीय नेताओं ने भी स्वामी जी के चित्रों को सराहा है।

दुर्गम एवं हिमाच्छादित पर्वत श्रृंखला तक हर व्यक्ति पहुँचकर प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द नहीं उठा सकता। इस बात को ध्यान में रखते हुए ही स्वामी जी के विशाल संकलन में से कुछ उत्कृष्ट चित्रों की एक स्थायी वीथिका विश्वविद्यालय के पुरातत्त्व संग्रहालय में ''हिमालय दर्शन चित्र वीथिका'' के रूप में नियोजित की गयी है। इस चित्रवीथी में केदारनाथ, गंगोत्री, शेषनाग, माना पर्वत शिखर, ब्रह्मकमल, मन्दा पर्वत शिखर, ओंकार-ब्रह्म, केदार ड्रम एवं कालिंदी से रताकुन्ना आदि पर्वत श्रंखलाओं तथा अन्य बहुत से विभिन्न रंगीन चित्र प्रदर्शित किये गये हैं।

इस वीथिका में साधारण से साधारण व्यक्ति भी कुछ क्षणों के लिए हिमालय के मनोरम दृष्यों में विचरण कर सकता है।

स्थायी चित्र वीथिका के अतिरिक्त स्वामी जी के संकलन में से चुनिंदा रंगीन चित्रों की अस्थायी प्रदर्शनी भी संग्रहालय के केन्द्रीय कक्ष में आयोजित की गयी है। इस प्रदर्शनी में हिमालय के मनोरम दृश्यों के साथ-साथ वनस्पति एवं सांस्कृतिक पक्षों से सम्बन्धित विभिन्न चित्र प्रदर्शित किये गये हैं।

प्रदर्शनी कर्मयोगी सन्यासी सुन्दरानन्द जी के सिद्धहस्त छायांकन के माध्यम से हिमालय के बहुअंगी पक्षों पर तो प्रकाश डालती ही है साथ ही यह मौन चित्रावली भारतीय पौराणिक आख्यानों की इस दिव्य पर्वत श्रृंखला की महिमा का बखान भी करती है।

संग्रहालय रोचक है व हमने कुछ कलाकृतियों को देखा। मैं संग्रहालय के निदेशक को अधिक से अधिक बधाई देती हूँ।

डा. माधुरी शाह
यू.जी.सी., अध्यक्ष

13 अक्टूबर 1984

वैयक्तिक संग्रह

संग्रहालय में स्वामी श्रद्धानन्द जी, पण्डित जवाहर लाल नेहरू, श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, जिन्हें भारत के राष्ट्रपति के द्वारा संस्कृत पाण्डित्य की उपाधि से सम्मानित किया गया था, एवं विश्व प्रसिद्ध वृत्तचित्र निर्माता श्री रोमेश बेदी के द्वारा खीचें गये छाया चित्रों के व्यक्तिगत संकलन का भी छोटा संग्रह है-

(क) श्रद्धानन्द वीथिका
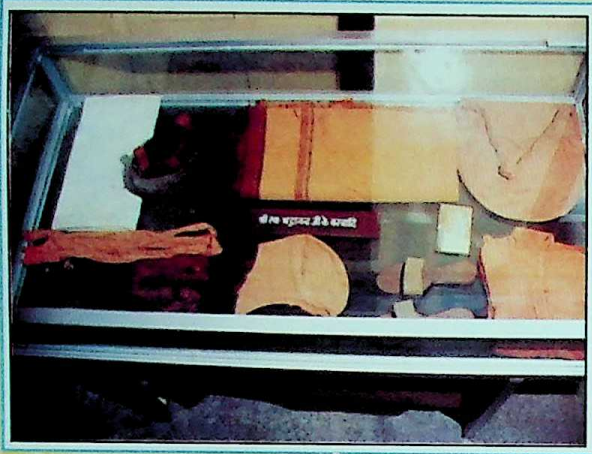
अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी के वस्त्रादि के चित्र

इस वीथिका में गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द के जीवन से सम्बद्ध वस्तुओं एवं चित्रों का प्रभावशाली संग्रह है।

इसका एक मुख्य आकर्षण स्वामी जी द्वारा अन्तिम समय में उपयोग में लाये गये वस्त्र एवं अन्य दैनिक प्रयोग की वस्तुओं का प्रदर्शन आर्यजनों के लिए विशेष रूप से आकर्षण का केन्द्र है। स्वामी जी अपनी वर्मा (म्यांमार) यात्रा के दौरान लाख एवं काष्ट कलाकृतियों का संग्रह अपने साथ लाये थे। स्वामी जी द्वारा संग्रहालय को प्रदत्त यह अनुपम संग्रह विशेष रूप से दर्शनीय है।

इसी वीथिका में पुण्य भूमि नाम से अभिहित कांगड़ी ग्राम, जहाँ सन् १९०२ में स्वामी जी ने गुरुकुल की स्थापना की थी, लेकिन १९२४ की बाढ़ के कारण वह स्थान छोड़ना पड़ा, की पहली इमारत का चित्र भी सुरक्षित है। साथ ही मुंशी अमन सिंह जिनके द्वारा दान में पुण्य भूमि प्राप्त हुई थी, का भी चित्र श्रद्धा से लोगों को अभिभूत कर देता है।

एक स्थान पर स्वामी जी का पारिवारिक सदस्यों के चित्र हैं। स्वामी जी ने, जिनका मूल नाम मुंशीराम था, अपनी जीविका का आरम्भ एक वकील की हैसियत से किया था और नायब्तहसीलदार के पद पर पहुँचे। लेकिन १८८३ ई० में इस पद से त्यागपत्र देकर पुनः वकालत करने लगे। इन सभी रूपों में स्वामी जी के विविधतापूर्ण चित्र यहाँ प्रदर्शित हैं। इसी क्रम में एक महत्त्वपूर्ण चित्र स्वामी जी के ज्येष्ठपुत्र और गुरुकुल के प्रथम स्नातक हरिशचन्द्र विद्यालंकार का है जिन्होंने राजा महेन्द्र प्रताप के साथ अफगानिस्तान में निर्वाचित भारत सरकार की स्थापना की थी और कालान्तर में सेनफ्रांसिस्को में लाला हरदयाल, भाई परमानन्द, करतार सिंह सराबा द्वारा स्थापित ''गदर पार्टी'' में शामिल हो गये थे।

इसी वीथिका में स्वामी जी के गुरु स्वामी दयानन्द एवं राष्ट्रीय जीवन के अन्य सहयोगियों ठाकुर माधव सिंह जी, भण्डारी शालिग्राम, लाला लाजपतराय, बाल गंगाधर तिलक, महामना मालवीय, मोतीलाल नेहरू, गोखले, डा० एम० ए० अन्सारी, हकीम अजमल खां, सी० एम० एण्ड्रयूज तथा रवीन्द्रनाथ टैगोर के चित्र दर्शकों को आकर्षित करते हैं।

१९१२ ई० में स्वामी जी गुरुकुल के आचार्य एवं मुख्य अधिष्ठाता बने। इस समय तक राष्ट्रीय आन्दोलन में उग्रवादी विचारधारा उभरने लगी थी और क्रान्तिकारियों से गुरुकुल भी अप्रभावित न रह सका। गुरुकुल के प्रति सरकार का भी सन्देह पुष्ट होता जा रहा था। अतः सरकारी दमन से गुरुकुल की रक्षा के लिए संयुक्त प्रान्त के गवर्नर जेम्स मेस्टन, लार्ड एवं लेडी चेम्स फोर्ड (१९१६) तथा रैम्जेमैक्डोनल को गुरुकुल में आमन्त्रित कर गुरुकुल को राजभक्त प्रदर्शित करने का ''पाखण्ड'' किया। इन ऐतिहासिक क्षणों को सफलता पूर्वक प्रदर्शित करते चित्र इस वीथिका में प्रदर्शित हैं। ६ अप्रैल १९१७ को महात्मा मुंशीराम ने सन्यास आश्रम में प्रवेश कर स्वामी श्रद्धानन्द

34वाँ कांग्रेस अधिवेशन, अमृतसर (1919) में भाग लिए हुए महानुभावों के चित्र

नाम ग्रहण किया। उनके सन्यासी जीवन ग्रहण करने के विविध पहलुओं के चित्र यहाँ संग्रहीत हैं।

स्वामी श्रद्धानन्द एवं महात्मा गाँधी का घनिष्ट सम्बन्ध यहाँ संकलित तस्वीरों एवं पत्रों से पूर्णतः प्रदर्शित होता है। १६१६ में स्वामी जी कांग्रेस के अमृतसर अधिवेशन के स्वागाध्यक्ष चुने गये। इस अवसर पर लिए गये चित्र में उनके साथ अनेक राष्ट्रीय नेता दिखाई पड़ रहे हैं। यह चित्र संग्रहालय की अनुपम धरोहर है। इसी समय राष्ट्रीय आन्दोलन की मजबूती के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रयासों के तहत मुसलमानों द्वारा स्वामी जी को जामा मस्जिद के मंच पर उपदेश देने के लिए आमन्त्रित किया गया। इस अवसर का एक तैल चित्र यहाँ संग्रहीत है।

स्वामी जी का शुद्धि आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा इसलिए कुछ कट्टरवादी मुस्लिम उनके शत्रु बन गये। इसकी चरम परिणति अब्दुल रशीद द्वारा उनकी हत्या के रूप में हुई। गोलियों से छलनी स्वामी जी का शरीर, चांदनी चौक एवं नया बाजार में उनकी शवयात्रा में उमड़े जनसमूह के चित्र एवं स्वामी जी के दाहसंस्कार के चित्र सारे वातावरण को शान्त मौन एवं अवाक् बनाये हैं। स्वामी जी की हत्या और श्रद्धानन्द स्मारक पर ''नवजीवन'' में महात्मा गांधी द्वारा लिखी गयी सम्पादकीय तथा गांधी जी द्वारा स्वामी जी के कनिष्ठ पुत्र इन्द्र जी को लिखा गया सांत्वना पत्र भी संग्रहालय की अमूल्य धरोहर है।

महात्मा मुंशीराम जी १६१७ में संन्यास लेकर स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती बन गए। स्वामी जी ने निडर एवं त्याग की भावना से स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया। १६१६ में अमृतसर के कांग्रेस अधिवेशन की स्वागत-समिति के सभापति बने तथा उसे सफलता पूर्वक सम्पन्न कराया। इन समय स्वामी जी की हार्दिक इच्छा थी कि गुरुकुल का कार्यभार अन्य को सौंप दिया जाए। स्वतन्त्रता संग्राम को सफल बनाने के साथ-साथ स्वामी जी हिन्दी प्रचार, दलितोद्धार, शुद्धि-सभाएँ, राष्ट्रीय एकता, हिन्दू संगठन आदि कार्यों में लगे रहे। स्वामी जी के इन पवित्र और अविस्मरणीय कार्यों से सम्बन्धित उनके जीवनकाल की सामग्री को इस संग्रहालय में संजोकर रखा गया है। इसकी सम्पूर्ण सामग्री हम धनाभाव के कारण तो प्राप्त नहीं कर पाए, पर जो प्राप्त है वह प्रदर्शित की गई है।

स्वामी जी ने शुद्धिप्रचार एवं एकता का संदेश दिल्ली की जामा मस्जिद में भी दिया, उसका एक तैलचित्र प्रदर्शित है। इसी प्रकार स्वामी जी की विभिन्न मुद्राएँ-लेटे हुए, बैठे हुए प्रदर्शित है। महत्वपूर्ण चित्र १६१६ का अमृतसर कांग्रेस अधिवेशन का है जिसमें स्वामी जी स्वागत समिति के अध्यक्ष थे। उनके साथ श्री गोखले, श्री मालवीय जी, श्री मोतीलाल नेहरू, पं० जवाहरलाल नेहरू, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद आदि पूज्य महापुरूष विराजमान हैं। स्वामी जी को जब गोली लगी तो मृत्यु-उपरांत उनकी शवयात्रा में अपार भीड़ थी, उसे प्रदर्शित किया गया है। सम्भवतः इतना जनसमूह कभी किसी शव-यात्रा में नहीं देखा गया जिसमें सभी जाति के लोग थे। अगला चित्र स्वामी जी के दाहसंस्कार का है जो सारे वातावरण को शांत, मौन एवं अवाक् बनाए हुए है। रोग -शैय्या से उन्होंने यह संदेश दिया था- ''भारत की मुक्ति चिर स्थायी हिन्दु-मुस्लिम एकता में निहित है।'' महात्मा गाँधी के शब्दो में वे एक वीर की तरह जिये और अन्त में वीर गति को प्राप्त हुये।

इसके बाद स्वामी जी के साथ लार्ड चेम्सफोर्ड के वे चित्र प्रदर्शित हैं जब उन्होने गुरुकुल का भ्रमण किया था। स्वामी जी के वस्त्र, खडाऊँ, चादर, झोला, कम्बल, कुर्ता, लंगोटी, टोपा आदि उनके मूलरूप में प्रदर्शित हैं जो

उनकी सादगी को प्रदर्शित करते हैं। स्वामी जी को ब्रह्मदेश की कुछ कलाकृतियाँ भेंटस्वरूप प्राप्त हुई थीं- वह प्रदर्शित हैं। इसी में एक सुभाषचन्द्र बोस की मूर्ति भी अपनी स्वतन्त्रतासंग्राम के सेनानी वेश-भूषा में शोभायमान है।

स्वामी जी से सम्बन्धित अनेक पत्रों में से कुछ पत्रों की फोटोप्रतियाँ भी प्रदर्शित हैं। इन पत्रों में स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का व्यक्तित्व मुखरित होता है। उन्होने घृणा एवं पाप को कभी अपने जीवन में फटकने नहीं दिया- गाँधी जी के पत्रों से स्पष्ट है।

ब्रह्मदेश की लाख की कला

संग्रहालय की उपयोगिता को भली भांति समझ करके ही स्वामी श्रद्धानन्द जी ने गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में एक संग्रहालय की नींव डाली थी। स्वामी जी को प्रचार के लिए कई बार दूर-दूर जाना पड़ता था। वहाँ से वे हमेशा नई जानकारी देने वाली कौतुकपूर्ण चीजों को साथ लाते थे। बरमा में बांस तथा लकड़ी पर लाख का कलापूर्ण काम होता है। स्वामी जी जब वहाँ गये तो इस के कुछ नमूने अपने साथ ले आये। इनमें बौद्ध भिक्षुओं के भिक्षा-पात्र, छोटी मंजूषाएं, बरमी किसानों के पत्ते के बने दाते आदि पदार्थ थे। लकड़ी के बर्तनों पर सुनहरी पालिस वर्षों के बाद भी खराब नहीं हुई। मंजूषाओं पर लाख का काम बहुत सुन्दर है। हाथियों का दृश्य बड़ा मनोहारी है। लाख का काम इतना पक्का है कि आज यह कहीं से न तो चटकी है और न रंग ही फीका पड़ा है। स्वामी जी ने अपनी म्यांमार (बर्मा जो ब्रह्मदेश के नाम से भी जाना जाता है) की यात्रा के समय वहां की लाख तथा काष्ठ से निर्मित वस्तुओं एवं कलाकृतियों से भारतीय जन मानुष को परिचित कराने के लिए उनके नमूनों का संग्रह अपने साथ लेकर आये हैं। स्वामी जी का यह संकलन अपनी उत्कृष्ट बनावट एवं सज्जा विशेष रूप से दर्शनीय है

स्वामी विरजानन्द जी की स्मृति में डाक-टिकट

स्वामी विरजानन्द जी महाराज के नाम से आर्य-जगत् भलीभाँति परिचित है। केन्द्रीय सरकार ने उन की पुण्य स्मृति में एक डाक-टिकट जारी किया है जो इस संग्रहालय में देखा जा सकता है। स्वामी जी की स्मृति में डाक टिकट जारी करके केन्द्रीय सरकार ने देश और समाज का मस्तक ऊँचा किया है।

(ख)पंडित जवाहरलाल नेहरू प्रदत्त संग्रह :

सन् १९५८ में भारत के प्रथम प्रधानमंत्री गुरुकुल पधारे थे। अपने बहुमूल्य संग्रह में से कुछ समय उन्होंने संग्रहालय को भी दिया। संग्रहालय के प्रदर्शन से प्रभावित होकर उन्होंने समय-समय पर मिले उपहारों में से कुछ उपहार गुरुकुल संग्रहालय को भेंट स्वरूप प्रदान किये प्राप्त उपहारों का एक छोटा सा संग्रह संग्रहालय में दर्शकों के लिए प्रदर्शित है।

(ग) पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार संग्रह

श्री सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार, जिन्हें भारत के राष्ट्रपति डा० नीलम संजीव रेड्डी के द्वारा संस्कृत पाण्डित्य की उपाधि से सम्मानित किया गया था, के व्यक्तिगत संकलन का भी छोटा सा संग्रह को प्रदर्शित किया गया है।

(घ) श्री रोमेश बेदी के द्वारा वन्य जीव जन्तुओं के छायाचित्रों का संग्रह

संग्रहालय भवन के ऊपरी तल पर प्रसिद्ध दूरदर्शन वृत्तान्त निर्माता श्री रोमेश बेदी के द्वारा हिमालय क्षेत्र के वन्य जीव जन्तुओं के छायाचित्रों का संग्रह भेंट में दिया गया है जिसे शोकेशों के अन्दर प्रदर्शित किया गया है। इसके अतिरिक्त उनके द्वारा उपहार स्वरूप दिए गए चित्रों के साथ कुछ महत्वपूर्ण जानवरों के अंगों के अवशेषों को भी प्रदर्शित किया गया है। जिसमें कृष्ण मृग का श्रृंग को भी दिखाया गया है।

इनके द्वारा हिमालय पर्वत के क्षेत्र में पायी जाने वाली वनस्पतियों के अतिरिक्त वहाँ निवासित जनजाति जौनसार बाबर से संबंधित वस्तुओं को भी संग्रहालय को भेंट स्वरूप दिया गया है। जिसका विवरण पहाड़ी संस्कृति खंड में किया गया है।

चित्रकला वीथिका

राधाकृष्ण
(नाथद्वारा शैली)

संग्रहालय का चित्रकला कक्ष विशेष समृद्ध है। संग्रहालय विभिन्न प्रकार की कला कृतियों से सुसज्जित है, जो दर्शकों को सहज ही आकर्षित कर लेते हैं। चित्र तथा कला के अन्य नमूने (आर्ट एण्ड पेटिंग्स) को विभिन्न दृष्टिकोणों से वर्गीकृत कर प्रदर्शित किया गया है। चित्र रंगीन एवं सादे दोनों प्रकार के हैं, जिन्हें निम्न भागों में वर्णित किया गया है :-

(क) विविध शैली-

संग्रहालय में विभिन्न शैलियों के चित्र रखे गये हैं, जिन में कई मनोहारी दृश्यों का अंकन किया गया है और वे दर्शकों के लिए विशेष रूचि के विषय सिद्ध होते हैं। इन में नाथ द्वारा तथा कांगड़ा शैली के चित्र प्रमुख हैं।

नाथ द्वारा शैली

भारतीय चित्रकला के इतिहास में राजपूत शैली का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व है। यद्यपि इस कला केन्द्र का आविर्भाव १४ वीं -१५ वीं शती में राजस्थान से प्रारम्भ हुआ किन्तु कई शताब्दियों तक भारत के विभिन्न प्रदेशों में भारतीय चित्रकला को प्रेरणा देने तथा उस की परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखने में राजपूत शैली का विशिष्ट योगदान रहा है। राजपूत शैली की समृद्धि के अनेक केन्द्र रहे हैं जिन में ग्वालियर, अम्बेर, मेवाड़, बीकानेर, जयपुर, कोटा, बूंदी आदि उल्लेखनीय है।

लगभग १८वीं शताब्दी में मेवाड़ में राजपूत शैली की नई शाखा का सूत्रपात हुआ। इस के प्रमुख केन्द्र नाथद्वारा तथा उदयपुर थे। नाथद्वारा शैली के चित्र अधिकतर कृष्ण भक्ति विषयक वैष्णव धर्म के हैं। कतिपय चित्रों में तत्कालीन लोक संस्कृति का चित्रण, दरबारी जीवन का चित्रण आदि अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से किया गया है।

इस संग्रहालय में नाथ द्वारा तथा उदयपुर से प्राप्त निम्नलिखित महत्वपूर्ण चित्र संग्रहीत है। रासलीला, श्रीकृष्ण राधा, धेनु चराना, शेषशायी विष्णु, वासुदेव का श्रीकृष्ण सहित गोकुलगमन आदि।

कांगड़ा शैली

पश्चिमी हिमालय के लगभग २०-२२ रियासतों में कांगड़ा का नाम प्रमुख रहा है। कांगड़ा शैली का सूत्रपात संभवतः १८वीं शताब्दी से प्रारम्भ हुआ जब कि वहाँ के कलाप्रेमी राजा घमण्डचन्द्र के शासन काल में विभिन्न रियासतों से नौकरी की तलाश में आये कलाकारों ने राजकीय आश्रय पाकर भारतीय चित्रकला के इतिहास में एक नयी शैली को जन्म दिया। कांगड़ा शैली के चित्रों को प्रमुख रूप से दो भागों में बांटा जा सकता है- (१) पौराणिक कथाओं के चित्र (२) व्यक्ति चित्र। कांगड़ा शैली की उन्नति में वहाँ के भव्य प्राकृतिक वातावरण का सर्वाधिक योगदान रहा है। इन चित्रों की विषय वस्तु पौराणिक, धार्मिक तथा मानवीय तीनों प्रकार की है। पौराणिक तथा धार्मिक कथावस्तु सर्वथा लोक जीवन की पृष्ठभूमि पर आधारित है तथा मानवीय कथावस्तु में सहजता एवं सरलता स्पष्ट देखने को मिलती है। स्त्रियों के चित्र बनाते समय चित्रकार ने भारतीय परम्परा, उस के आदर्श एवं मर्यादित रूप पर विशेष ध्यान दिया है।

मास फाल्गुन में रंग खेलते हुए राधाकृष्ण राजस्थान परम्परा की जयपुर शैली

संग्रहालय में संग्रहीत कांगड़ा शैली के निम्नलिखित चित्र उल्लेखनीय हैं:-

चीर हरण लीला दृश्य, लक्ष्मी का गजों द्वारा अभिषेक (गज लक्ष्मी या अभिषेक लक्ष्मी), कालियादमन लीला, वासुदेव का कृष्ण सहित गोकुल गमन।

कनखल (हरिद्वार) के भित्ति चित्र

संग्रहालय क्षेत्र में ही स्थित एक प्राचीन नगर कनखल है। यहाँ की प्राचीन हवेलियों पर अत्यन्त आकर्षक भित्ति-चित्र बने हैं जो १६ वीं शती के प्रतीत होते हैं। यहीं के निर्मल अखाड़ा नामक विशाल ईमारत पर बनी सुन्दर प्रमुख प्रतिकृतियां अग्रलिखित हैं:-

राम-सीता, शंखचक्र गदाधारी गरूड़ारूढ़ भगवान्, द्वार के चारों ओर के अलंकरण, आसावरी रागिनी, भगवान् कृष्ण, गुरू नानक, शुक्र क्रीड़ा करती हुई वनिता, होलीकोत्सव का दृश्य, श्रीराम राज्याभिषेक, शिव और पार्वती, विश्राम का दृश्य, ध्यानमग्न नायिका, शेषशय्या पर भगवान् विष्णु तथा कंचुकी नायिका के साथ।

इस भित्ति चित्र कला में मुगल, पहाड़ी, कांगड़ा तथा यूरोपीय कला शैलियों का सम्मिश्रण हुआ है जिन के प्रभाव को चित्रों के सूक्ष्म अवलोकन से स्पष्ट देखा जा सकता है। इन में कई चित्र ईस्ट इण्डिया कम्पनी की शैली से भी मिलते हैं।

अन्य चित्रों का विवरण

बृहत्तर भारतीय कला के अन्तर्गत कई चित्रों को यहाँ रखा गया है जिन में चीन में भारतीय कला, कम्बुज में प्राप्त भगवान् तथागत से सम्बन्धित कला के नमूने तथा चम्पा में भारतीय कला शैलियों के कई उदाहरण इस क्रम में उल्लेखनीय हैं। सिक्ख गुरुओं के लगभग १० चित्र सिक्ख धर्म के परिचायक होने के साथ कला के सुन्दर उदाहरण है।

संस्कृत साहित्य के विद्यार्थियों की शिक्षा एवं ज्ञानवर्धन की दृष्टि से कालिदास के काव्यों में वर्णित राजहंस चातक, सारिका आदि पक्षियों को बहुरंगी चित्रों में सुन्दर ढ़ंग से प्रदर्शित किया गया है।

चित्र विभाग में पहाड़ी कला के अनेक चित्र प्रदर्शित हैं इन में से कुछ चित्र उच्चकोटि के भी हैं। टिहरी-गढ़वाल की रियासत में १८वीं और १६वीं शती में चित्रकला की पहाड़ी शैली का अच्छा विकास हुआ। मुगल दरबारों में रहने वाले अनेक चित्रकार टिहरी नरेशों के संरक्षण में रहे थे। उन के तथा उन के वंशजों के द्वारा पहाड़ी चित्रकला को ही बहुत ही प्रोत्साहन मिला। इस शैली के कितने ही चित्र अब भी पूर्वी पंजाब, टिहरी गढ़वाल तथा अल्मोड़ा जिले के विभिन्न स्थानों पर पड़े हुए हैं। इन में से कुछ चुने हुए चित्रों का संग्रह गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार के संग्रहालय में किये जाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

यहाँ के पहाड़ी शैली के चित्रों को कला-मर्मज्ञ बड़े चाव से देखते हैं, उन के मुख्य विषय पौराणिक होने से सर्वसाधारण भी उन में कम दिलचस्पी नहीं लेते। ये चित्र वनस्पतियों और खनिजों से निर्मित पक्के चमकदार रंगों से दीवारों और कागजों पर बनाये जाते थे। संग्रहालय में दोनों प्रकार के चित्रों के नमूने हैं। हमारे देश के कलाकार आजकल सामान्यतया इस शैली के चित्र नहीं बनाते और न ही इस सामग्री का उपयोग करते हैं।

संग्रहालय में प्राचीन सिक्कों, मूर्तियों व मुद्राओं पर कुछ शासकों व विशिष्ट कम्पनियों के चित्र मिलते हैं, जिन्हे बड़े आकार में बनाया गया है। चीनी यात्री युआन-च्वांन, चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, समुद्रगुप्त, बादशाह अकबर, दाराशिकोह, तुलसीदास, नरसी मेहता आदि ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक महत्व के व्यक्तियों के प्रारम्भिक चित्र इस संग्रहालय में हैं।

कुलभूमि में आकर और यहाँ के संग्रहालय में मृण्मूर्ति दीर्घा का उद्घाटन कर अत्याधिक हर्ष हुआ। संग्रहालय की यह दीर्घा बहुत सुन्दर और ज्ञानवर्धक है। मैं संग्रहालय और गुरुकुल विश्वविद्यालय की उत्तरोत्तर उन्नति की कामना करता हूँ।

13 मई 2010

योगानन्द शास्त्री

(क) शोध-कक्ष

श्री रघुवीरसिंह शास्त्री, तत्कालीन कुलपति की प्रेरणा से संग्रहालय में एक शोध-कक्ष की स्थापना की गई थी। इस समय संग्रहालय के पुस्तकालय में २३०० से ऊपर उच्च कोटि के ग्रन्थ व शोध पत्रिकाएं हैं। ये भारतीय इतिहास, संस्कृति, कला तथा पुरातत्त्व से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हैं। इन का उपयोग हमारे यहाँ के शोधार्थी तथा एम० ए० के विद्यार्थी विशेष रूप से करते हैं।
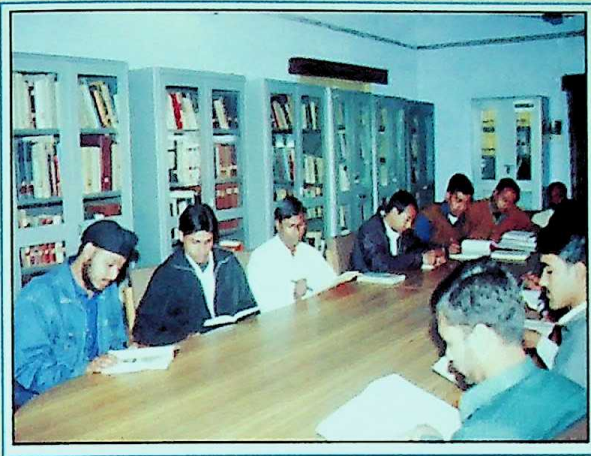
शोध कक्ष में अध्यनरत शोधार्थी

शोध-कक्ष अभी अपनी आरम्भिक अवस्था में हैं। यहाँ पर बैठने की उत्तम व्यवस्था तथा अन्य आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराने का कार्य पूर्ण हो गया है। देश-विदेश में आज बहुत से ऐसे संग्रहालय हैं, जो शोध-केन्द्र के रूप में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। हमें आशा है कि यह पुरातत्त्व संग्रहालय भी इस दिशा में माननीय कुलपति प्रो० स्वतन्त्र कुमार के मार्गदर्शन में सक्रिय रूप से कुछ कार्य करने में समर्थ होगा।

(ख) पहाड़ी संस्कृति

संग्रहालय में उत्तराखण्ड राज्य के देहरादून जनपद के चकराता तहसील में विकास कर रहे एक जनजाति, जिसे जौनसार बाबर कहा जाता है के दैनिक जीवन से सम्बंधित वस्तुओं को प्रदर्शित किया गया है। इसके अन्तर्गत इस कक्ष में पहाड़ी लोगों की उन रोगनाशक मूर्तियों का यहाँ पर संग्रह किया गया है जिनके द्वारा वे आसुरी शक्तियों का निराकरण करते हैं। पहाड़ी प्रदेश में मिलने वाला पेड़ भीमल है जो यहाँ के निवासियों की अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। इस की छाल से मजबूत रस्सी बनाई जाती हैं। इस के छोटे फलों को बच्चे नहीं छोड़ते। रात को एक गाँव से दूसरे गाँव में जाने के लिए इस की सूखी शाखायें मशाल का काम करती हैं। श्री रामेश बेदी के सौजन्य से इस उपयोगी पेड़ की चीजें तथा पहाड़ के कोदा, झिंगोरा, मार्सू, झिंगराल, भट्ट और गहत आदि खाद्य पदार्थ इस संग्रहालय को प्राप्त हुए हैं। उत्तराखण्ड के वन विभाग की उपज, हिमालय में पाये जाने वाले पत्थर तथा जौनसार बाबर के लोक जीवन को चित्रित करने वाली वस्तुएं इस संग्रहालय में संगृहीत हैं। उत्तराखण्ड के दर्शनीय स्थानों तथा प्रमुख वनस्पतियों के चित्र भी यहाँ देखे जा सकते हैं।

मुद्रा से अंकित पाथा

गढ़वाल में आज भी अनेक स्थानों पर अनाज का लेन-देन तौल से न होकर माप से होता है। इस माप को वहाँ पाथा कहते हैं। अप्रैल १९५२ में श्री रामेश बेदी ने संवत् १९८९ के बने एक पाथे को गढ़वाल से प्राप्त करके इस संग्रहालय को दिया। २०० वर्ष से अधिक पुराने तांबे के इस पाथे पर राजकीय मुद्रा अंकित है जो इस के अधिकृत माप की परिचायक है। राजा, मंत्री तथा जिसे यह पाथा दिया गया, उस का नाम तथा काल का विवरण इस पाथा पर मिलता है।

लिपि व रेखा चित्र एवं छाया चित्र वीथी

लिपि कक्ष :- इसमें विविध लिपियों के चार्ट प्रदर्शित हैं मानव समाज को नयी दिशा देने वाले अविष्कारों में लेखनकला की उपयोगिता किसी से कम नहीं है। इसी कारण ही मानव के लिए यह सम्भव हो सका है कि वह ज्ञान का सृजन संरक्षण एवं सातव्य बनाये रखें। लेखन कला का अविष्कार, उसमें सुधार एवं विकास की कथा यदि अत्यन्त रोचक है तो उससे कम रोमांचक नहीं है। अनेक भूली बिसरी लिपियों को पहचानने एवं समझने का आधुनिक विद्वानों के प्रयास को भी प्रदर्शित किया गया है।

लेखन की दिशा में भारतीय मनीषियों के दो सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य ब्रह्मी लिपि और वर्तमान शैली के अंकों की कल्पना है। इन्हीं दो विषयों और उसमें समय-समय पर आये रूपांतरों को प्रदर्शित करती यह वीथिका है।

यहाँ संग्रहीत दो लिपिपत्र छठी शताब्दी ई० तक भारत में प्रचलित प्राचीन अंक शैली, जिसमें इकाई, दहाई सैकड़ा, हजार हेतु अलग-अलग चिह्न थे को, और ५६५ ई० के गूर्जर वंशी लेख से सर्वप्रथम प्रारम्भ शून्य युक्त नवीन शैली के अंकों को प्रदर्शित करते हैं।

अशोक के अभिलेख प्राचीनम भारतीय अभिलेख माने जाते हैं जो ब्राह्मी, खरोष्ठी, ग्रीक एवं अरमेइक लिपियों में लिखे गये। इसके ब्राह्मी और खरोष्ठी लेख तथा उनके बाद ब्राह्मी के विकास को चौथी शताब्दी तक प्रदर्शित करने के लिए सातवाहनों, कुषाणों और शकक्षत्रपों के नासिक, मथुरा, पभोसा, भट्टिप्रोलु, अमरावती जग्गयपेट और जूनागढ़ लेखों के अक्षरों को प्रदर्शित किया गया है।

चौथी शताब्दी के बाद ब्राह्मी लेखन का प्रवाह स्पष्टतः उत्तरी और दक्षिणी दो शैलियों में विभक्त हो जाता है। इन्हीं दो शैलियों से उर्दू को छोड़कर लगभग समस्त आधुनिक भारतीय लिपियां विकसित हुई हैं। इस विकास को प्रदर्शित करते कई लिपि पत्र हैं।

एक लिपि पत्र ब्राह्मी से कश्मीरी शारदा लिपि के विकास को दर्शाता है जो १० वीं शताब्दी के आस-पास कश्मीर में प्रचलित हुई। कश्मीर को शारदा देवी का क्षेत्र मानने से इसका यह नाम पड़ा। इसी तरह पंजाब में मात्राहीन काम चालाऊ, लंडा लिपि का प्रचलन था, गुरु अंगद देव ने इसे ही गुरु ग्रंथ साहब लिखने के लिए मात्रायुक्त बनाकर गुरुमुखी के रूप में विकसित किया। गुरुओं से सम्बद्ध होने के कारण यह गुरुमुखी कहलाई। इसका एक लिपि पत्र प्रदर्शित है। कुछ लिपि पत्र नागरी से कैथी, बंगला और मैथिली लिपियों का विकास प्रदर्शित करते हैं, जो क्रमशः मगध, बंगाल और मिथिला में प्रचलित थीं।

कुछ अन्य लिपि पत्रों में तमिल, मलयालम, कन्नड़ी और ग्रंथ लिपियों का विकास दर्शाया गया है। संस्कृत से एकदम भिन्न तमिल भाषा के अक्षर ब्राह्मी से ही लिये गये हैं। केवल १८ व्यंजन होने से इसमें संस्कृत नहीं लिखी जा सकती थी अतः जहाँ संस्कृत शब्दों का प्रयोग होता वहाँ ग्रंथ लिपि में लेखन होता था और मलयालम लिपि ग्रंथ लिपि का घसीट रूप है।

एक लिपि पत्र में पाली वर्णमाला के विभिन्न देशों में प्रचलित स्वरूपों का प्रदर्शन किया गया है तो एक अन्य लिपि पत्र में ब्राह्मी की विश्व की अन्य लिपियाँ इथियोपी, नश्की, अरबी, फिनीशियन, ग्रीक, लैटिन आदि से समरूपता प्रदर्शित की गयी है। इसे देखकर मन में यह स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि क्या भारत और विश्व की अन्य लिपियों का स्रोत एक ही है। क्या भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी, देवनागरी विश्वभारती के पथ पर अग्रसर हो सकती है।

भारत की प्राचीन, ब्राह्मी, खरोष्टी तथा पाली आदि एवं वर्तमान काल की देवनागरी, बंगाली, उड़िया, गुजराती, तमिल, तेलगू, कन्नड़ और मलयालम आदि लिपियों के प्रादुर्भाव और विकास की चित्रों में प्रदर्शित किया

गया है। इनसे तीसरी शती ईसा पूर्व से वर्तमान समय तक की लगभग सभी भारतीय लिपियों में होने वाले परिवर्तनों पूरा परिचय प्राप्त होता है।

वेशभूषा चित्रण

भारत के प्राचीन काल में प्रयोग किये जाने वाली विभिन्न प्रकार की वेशभूषाओं तथा श्रृंगार सामग्रियों और उनकी अनेक पद्धतियों को प्रदर्शित करने वाले अनेक सुन्दर चित्रों का निर्माण कराया गया है, जो दर्शकों को तत्कालीन सभ्य समाज की उन्नति अवस्था तथा विशेषतया उच्चकोटि की शैली के परिचायक है जिनका विवरण निम्न है :-

वस्त्राभूषण से सुसज्जित मुगल बेगमें, अजन्ता में चित्रित पुरुषों की वेशभूषा, मुगल बादशाहों के वस्त्रालंकरण, गुप्तकालीन पुरूषों की वेशभूषा, अजन्ता में चित्रित अजन्ता शैली के नारी आभूषण, जयपुर-अलवर नरेशों के परम्परागत आभूषण, गुप्तकालीन स्त्रियों की वेशभूषा, गुप्तकालीन सिरों की वेशभूषा।

भारत के प्रमुख शासनकालों में जनता द्वारा प्रयोग किये जाने वाले वस्त्र परिधान तथा अन्य आभूषण सम्बन्धी सुन्दर चित्रों को संग्रहालय में लगाया गया है जो तत्कालीन वेशभूषा का जन-साधारण को परिचय कराने में अत्यधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं। इस प्रकार के चित्र अग्रलिखित हैं:-शुंग काल की वेशभूषा, शुंग काल की पगड़ियां, सिन्धु सभ्यता के वस्त्राभूषण, सातवाहन काल के वस्त्र, बेग्राम से प्राप्त दांतों से निर्मित आभूषण, कलिंग की स्त्रियों की वेशभूषा, अजन्ता के चित्रों में उच्च वर्ग की वेशभूषा, कुषाणकालीन स्त्री-पुरूषों के वस्त्रालंकरण।

वेशभूषा के अतिरिक्त प्राचीन काल के ललित कलाओं तथा अन्य आवश्यक गतिविधियों से सम्बन्धित सामग्री के चित्रों को भी यहां दिखाया गया है जो उस समय की सार्वजनिक समृद्धि के परिचायक हैं जैसः-गुप्तकालीन संगीत, नृत्यादि आमोद प्रमोद, गुप्तकालीन गृह सज्जा आदि, गुप्त सम्राट् व उनके सिक्के, गुप्त कालीन अस्त्र-शस्त्र।

वास्तु चित्रण

वास्तु चित्रण के अतिरिक्त प्राचीन भारत की वास्तुकला के क्रमिक विकास को दर्शाते हुए विभिन्न प्रकार के चित्र इस कक्ष में प्रदर्शित किये गये हैं। ये चित्र जनसाधारण के ज्ञान में अभिवृद्धि करने में महत्वपूर्ण सिद्ध हो रहे हैं। इनके उल्लेखनीय उदाहरण निम्नलिखित हैं:- भरहूत स्तूप के अलंकरण के चित्र, गुप्तकालीन स्थापत्य, काष्ठ के गृह चित्र, लयण कला, चैत्य गुहा (हीनयानी), बैराट (जयपुर) का देवालय, सांची, कार्ले आदि के स्तूप, उड़ीसा के देवालय का नमूना, चालुक्यकालीन भारत की वास्तुकला, जन्दियाल देवालय, द्रविड़ पल्लव शैली के वास्तु चित्र, बौद्ध तथा हिन्दू देवालयों के स्तम्भ अलंकरण, प्रारम्भिक देवालयों के प्रकार,मन्दिर प्रकारों का उद्भव, गुजराती देवालयों का विवरण, बौद्ध तथा हिन्दू भवनों के स्तम्भ अलंकरण आदि।

अन्य प्रकार के कई चित्रों का पृथक् प्रदर्शन किया गया है। ये भारत की प्राचीन भौगोलिक स्थिति के परिचायक होने के साथ महत्वपूर्ण वास्तु कला की शैलियों को चित्रित करते हैं और ऐसे रंगीन चित्र दर्शकों को आकर्षित करते हैं, जिनका विवरण इस प्रकार हैः- प्रारम्भिक बौधिकायें, देवालयों के प्रकार, बौद्ध पूर्व भारत, इण्डो आर्य भारत, द्रविड़ बौधिकाओं का विकास,खजुराहों के देवालयों तथा शिखर शैली का विकास, रथ मन्दिरों का चित्रण, प्रारम्भिक छत अलंकरणों का अंकन तथा अजन्ता गुहाओं के रूप आदि।

इन के अतिरिक्त वर्तमान निदेशक के प्रयास से अजन्ता एवं एलोरा से सम्बन्धित चित्रों तथा अन्य महत्वपूर्ण चित्रों की प्रतिकृतियां (फोटो) प्राप्त करने का प्रबन्ध संग्रहाध्यक्ष के द्वारा किया जा रहा है।

प्लास्टर कास्ट में नृतत्त्व शास्त्र से सम्बन्धित सामग्री

भारत के विभिन्न क्षेत्रों के निवासियों की मुखाकृति प्रस्तुत करने के लिए संग्रहालय में प्लास्टरकास्ट नमूने संकलित हैं। इन मुखाकृतियों की भावभंगिमा बड़ी सुन्दर और सजीव है। ये अग्रलिखित हैं- गुजराती नर-नारी, जौनसारी नर-नारी, वेंगा नर-नारी, केडर आदिवासी -नर,उंगी नर, संथाल नर, लेचवा नर, नागा नर, मद्रासी नर, मराठी नर, बंगाली नर-नारी, उड़िया नर, चेंबु नर, निकोबारी नारी, उत्तर प्रदेशीय नर-नारी, बिहारी नर, अबोरं नर-नारी, मालबाई नर आदि।

प्लास्टर-कास्ट कक्ष

विभिन्न संग्रहालयों के द्वारा प्राचीन भारतीय कला के महत्त्वपूर्ण उदाहरणों को प्लास्टर कास्ट में बनाये गये प्रतिकृतियों को इस संग्रहालय द्वारा खरीदकर उसे प्रदर्शित किया गया है ताकि जनसाधारण तथा विद्यार्थी उसकी महत्ता को समझ सकें। इसके अतिरिक्त भारतीय कला की विभिन्न दुर्लभ मूर्तियों के प्लास्टर कास्ट के नमूने भी यहाँ संग्रहीत हैं जो शिक्षा के माध्यम के रूप में उपयोगी हैं। महत्वपूर्ण प्लास्टर कास्ट अनुकृतियों में निम्नलिखित का वर्णन रोचक है ?

१. मथुरा संग्रहालय से प्राप्त नागराज के दरबार का दृश्य दिखाता पट्टिका।
२. मथुरा संग्रहालय से प्राप्त शिशु सहित मातृका पट्टिका।
३. दर्पण देखती हुई नारी।
४. सोंख से प्राप्त कुषाण कालीन पक्षी
५. मथुरा संग्रहालय से प्राप्त एकश्रृंग ऋषि के जीवन के दृश्य संबंधी पट्टिका।
६. लखनऊ संग्रहालय से प्राप्त बौद्ध देवी तारा व बौद्ध देव अवलोकितेश्वर व वैष्णव देव विष्णु की मूर्तियाँ
७. पारंपरिक भारतीय केश सज्जा से युक्त नारी आदि।

साथ ही समय-समय पर गुरुकुल पधारे महानुभावों एवं गुरुकुल तथा उसके विद्यार्थियों एवं आचार्यों के विभिन्न छाया चित्र यहाँ संग्रहीत हैं। जिसमें पंडित जवाहर लाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री, श्रीमती इंदिरा गाँधी, श्री ज्ञानी जैल सिंह, डा० सर्वपल्ली राधा-कृष्णण आदि के गुरुकुल आगमन के समय का चित्रों का वर्णन उल्लेखनीय है।

मैं एक माह (1 अगस्त से 2 सितम्बर 83) गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में 'विजिटिंग फेलो' के रूप में रहा। मैंने देश-विदेश की कई बार यात्रा की है और अनेक संग्रहालय देखे हैं। भारतवर्ष में ऐसा कोई विश्वविद्यालय नहीं है जिसके पास इतना सुन्दर, विशाल, और समृद्ध संग्रहालय है। मेरी दृष्टि में इस विश्वविद्यालय का यह सबसे बड़ा आकर्षण तो है ही, साथ ही सबसे बड़ी उपलब्धि भी। यदि विश्वविद्यालय अधिकारी इसकी ओर थोड़ा और ध्यान दें तो यह इस क्षेत्र का सबसे बड़ा संग्रहालय केन्द्र होगा। सुन्दर संग्रहालय उस क्षेत्र की संस्कृति का सबसे बड़ा मापदंड माना जाता है।

मैं इसकी उत्तरोत्तर प्रगति और विकास की कामना करता हूँ।

13 अक्टूबर 1984

डा0 उपेन्द्र कुमार ठाकुर
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष
प्राचीन भारतीय एवं एशियाई अध्ययन विभाग
मगध विश्वविद्यालय, बोध गया

पाण्डुलिपि कक्ष

प्राचीन हस्त लिखित ग्रन्थों का एक अच्छा संग्रह भी संग्रहालय के पास है। संस्कृत, हिन्दी, बंगला, उड़िया, तिब्बती, फारसी, उर्दू एवं गुरूमुखी भाषा की लगभग ३६३ पाण्डुलिपियाँ हैं, जो प्राचीन भारतीय लेखन के विभिन्न माध्यमों जैसे भोजपत्र, ताड़पत्र, कागज आदि से परिचय कराती हैं। यहां उडिया भाषा में गौराग महाप्रभु के शिष्य द्वारा लिखित ताड़पत्र पर लिखित ''तूलवीणा'' नामक ग्रंथ की हस्तलिखित पाण्डुलिपि, महाभारत एवं रामायण के फारसी अनुवाद, श्री गुरूग्रंथ साहिब, कुरानशरीफ, सचित्र भागवत पुराण का दशम स्कन्ध, तिब्बती भाषा की तांत्रिक पाण्डुलिपियां विशेष रूप से प्रदर्शित है।
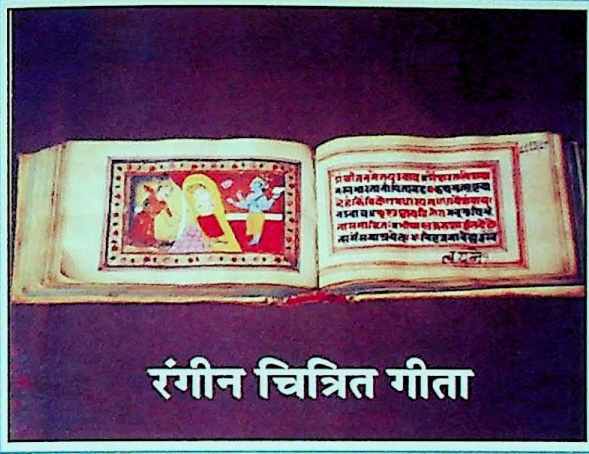
स्वामी दयानन्द जी द्वारा रचित एवं संशोधित ''सत्यार्थ प्रकाश'' के प्रथम संस्करण की पाण्डुलिपि का एक अद्वितीय संग्रह भी विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, जो आज भी आर्य जनों की श्रद्धा का केन्द्र बना हुआ है। इसके अतिरिक्त ईसा की १६ वीं शताब्दी के समय की तिब्बती पाण्डुलिपियाँ भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है जो उत्तम श्वेत कागज पर लिखी गयी तंत्रविद्या का ग्रन्थ है। इस लिपि में 29"x 7.5" आकार के उत्तम नीले कागज पर पीताम श्वेत स्याही द्वारा अंकित पाण्डुलिपि संग्रहालय का एक प्रमुख आकर्षण का केन्द्र है।

यहां संग्रहीत हिन्दु-धर्म के विभिन्न पवित्रग्रन्थों में बाल्मिकि द्वारा रचित 'रामायण' की टीका सहित कई प्राचीन प्रतियाँ तथा फारसी में लिखित महाभारत संग्रहीत हैं। इनमे से पंडित विश्वनाथ ईशापुर वाले द्वारा लिखित ''अयोध्याकाण्ड'' विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। संस्कृत भाषा में लिखे इस ग्रन्थ का आकार 9" x 8 है। महाभारत' के कई प्रकार के संस्करण, जिनमें अकबर के काल में अबुलफजल के निरीक्षण में महाभारत का ''रज्जनामा'' नाम से फारसी अनुवाद तथा छन्दोबद्ध 'कर्ण-पर्व' विशेषतः उल्लेखनीय है, संग्रहीत है।

'श्रीमद्भागवतगीता' की भी अनेक प्रतियों को प्रदर्शित किया गया है जिनमें से गुरुमुखी में लिखित छोटे आकार (3.5"x 2") की गीता, पंचरत्न गीता तथा गीता (विष्णु सचित्र सहस्रनाम) भी संग्रहीत हैं। इनकी भाषा संस्कृत है।

संग्रहालय में बंगला लिपि में लिखित पाण्डुलिपियों का भी अच्छा संग्रह है जिसमें 12"x 4.5 वाला 'देवी-स्तोत्र' तथा 15"x 3 के आकार वाली 'मनु-स्मृति' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन ग्रन्थों में हिन्दू-धर्म के क्षेत्रीय भाषा-भाषी लोगों में लोकप्रियता की अच्छी झलक मिलती है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित एवं संशोधित 'सत्यार्थ प्रकाश' के प्रथम संस्करण की पाण्डुलिपि

प्राचीन पुस्तकों में सचित्र 'श्रीमद्भागवत पुराण' १०० वर्षों से भी अधिक प्राचीन है। यह काश्मीरी कागज पर लिखा गया है, जो विक्रमसंवत् १६४२ में श्री गंगाप्रसाद द्वारा रचित 'स्त्रोत रत्नाकर' पर आधारित है। साथ ही साथ लगभग २०० वर्ष पुरानी अवधी भाषा और देवनागरी में लिखित ''रागचन्द्रिका'' बरबस ही

सचित्र भागवत पुराण

आकर्षित कर लेती है। सिक्ख धर्म से सम्बद्ध पाण्डुलिपियों में गुरुग्रंथ साहिब की १८ वीं शती की हस्तलिखित पाण्डुलिपि और गुरुगोविन्द सिंह द्वारा रचित ''दशम ग्रंथ'' की १८४५ ई० में लिखी गई हस्तलिखित प्रतिकृति विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

मुस्लिम धर्म से संबद्ध पुस्तकों में 'कुरान शरीफ' की हस्त लिखित पाण्डुलिपि हैं जिसमें ओंरगजेब के भी हस्तलेख हैं। इसके अतिरिक्त हजरत उमर द्वारा लिखित 'मुहम्मद साहब के तबरूक' के शीर्षक वाली पाण्डुलिपि और शेखसादी द्वारा रचित 'गुलिस्ता' की फारसी में लिखित कई प्रतियां संकलित हैं।

देहरादून के श्री कृष्णनन्द शर्मा द्वारा ८० के दशक में चलने वाले रिकार्डर पर अंकित ''सम्पूर्ण श्रीमदभागवत गीता'' भी दर्शकों को आकर्षित करती है। इसके अतिरिक्त ताड़पत्र, कर्टियस (चतुर्थ शती ई०पू०) और अलबरूनी द्वारा वर्णित भूर्ज नामक वृक्ष की भीतरी छाल से निर्मित भोजपत्र जो कश्मीर और पंजाब में प्रयुक्त होता था आदि लेखन माध्यम पर भी उत्कीर्ण अनेक पाण्डुलिपियाँ संग्रहालय में दर्शकों के अवलोकनार्थ प्रदर्शित हैं।

आज गुरुकुल कांगड़ी के पुरातत्व संग्रहालय को देखने का सुअवसर मिला। देखकर मन को बहुत संतोष हुआ। यहाँ सचमुच कुछ अदभुत वस्तुएँ हैं। मन होता है कुछ दिन यहाँ बैठ कर प्राचीन भारतीय संस्कृति का अध्ययन किया जाय। हमारा भूतकाल संस्कृति की अक्षेय भंडार है। उसका आद्य प्रमाण यहाँ उपलब्ध है।

मुझे विश्वास है इसे सुरक्षित ही नहीं रखा जाएगा बल्कि इसके आधार पर अनुसन्धानपरक साहित्य का सृजन भी किया जाएगा।

मेरी हार्दिक शुभकामनाऐं।

05 मार्च 1987

विष्णु प्रभाकर
लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार

विश्वविद्यालय संग्रहालय में पुरावशेषों का एक प्रतिनिधि संग्रह देखकर अप्रत्याशित आनंद हुआ। कुछ मूर्तियाँ अद्वितीय एवं विलक्षण हैं, विशेषतः क्षेत्रीय संग्रह। लघुचित्रों 'पाण्डुलिपियों, धातु के अवशेषों, मूर्तियों के उदाहरण स्मरणीय है। निश्चय ही संग्रहालय की अपनी निजी प्रधानता सराहनीय है, संग्रहकर्ताओं के लिए आभार सहित।

20 जुलाई 1997

रमानाथ मिश्र
आचार्य एवं अध्यक्ष
प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व अध्ययन
जीवाजी विश्विविद्यालय, ग्वालियर

मृदिकापात्र संग्रह

इस संग्रहालय में मृदिकापात्र तथा मृण्मूर्ति कक्ष में प्राक् सैन्धव मृदिकापात्र से लेकर मध्यकालीन मृदिकापात्र देखने को मिलते हैं जिनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है :

(क) प्राक्सैन्धव मृदिकापात्र (३२०० ई० पू०-२६०० ई० पू०) इस संस्कृति के दो प्रकार के मृदिका पात्र कक्ष में प्रदर्शित हैं। इन मृदिकापात्रों में कुछ ऐसे चित्रित पात्र देखने को मिलते हैं जिन पर एक के अन्दर एक गोले (Concentric Circle), पत्तियों के आकार, धारीदार तथा तिरछी रेखाएं अंकित हैं जिनके बीच बिन्दु बना दिये गये हैं तथा इनके ऊपर-नीचे समानान्तर रेखाएं बनी हुई हैं। इसके अलावा आड़ी-तिरछी लाइनों के नमूने व धारीदार रेखाएं जिनका ऊपरी हिस्सा समानांतर रेखा को छूता है, अंकित हैं। कुछ पात्रें पर छोटे-छोटे गोले व कंघी के समान आकार पूरी सतह पर अनियमित रूप से बने हुए हैं। इनके सतह का रंग सामान्यतः भूरा है लेकिन सेक्सन में लाल रंग का प्रतीत होता है।

इसके अतिरिक्त जो दूसरे किस्म के मृदिकापात्र मिलते हैं उनके सतह का रंग भी मूलतः भूरा ही है जिस पर काले रंग से एक के अन्दर एक गोले चित्रित हैं जो चार बिन्दुओं पर लम्ब व समानान्तर रेखाओं से जुड़े हुए हैं। इसके अलावा कुछ पात्रों पर दो-दो रेखाओं के घेरे चित्रित हैं जिनमें एक घेरे के बीच वृत तथा दूसरे के बीच चतुष्कोण हैं जिनके बीच वृत दर्शाए गए हैं। इन दोनो नमूने के बीच दो समानांतर रेखाएं खिंची हैं जिनके मध्य अपेक्षाकृत एक मोटा घेरा खिंचा है। इन घेरों के नीचे एक और मोटा घेरा जिस पर पत्तियाँ लटक रहीं हैं, चित्रित हैं।

वीथिका में जो मृदिकापात्र प्रदर्शित हैं उनमें सिर्फ एक पात्र के अतिरिक्त किसी भी पात्र का कोई निश्चित आकार नहीं है। वह एक पात्र थाली (Dish) के आकार का है।

सिंधु मृदिकापात्र

इसका काल लगभग २६०० ई० पू० से १६०० ई० पू० है। ये पात्र सर्वेक्षण के दौरान राखीगढ़ी (हिसार), बनावली (फतेहाबाद), मिताथल (भवानी), मानहेर (भवानी), मिरजापुर (हिसार), पौली (जीन्द) व गिरोड़ (रोहतक), कालीबंगा नामक स्थलों से एकत्रित किए गए हैं और ये सभी स्थान हरियाणा राज्य तथा उत्तरी राजस्थान में हैं।

सिंधु संस्कृति के प्रदर्शित मृदिकापात्र भी दो प्रकार के हैं। एक पर काले रंग से मछली के शल्क सदृश नमूना (Fish Scale) व पत्तियाँ चित्रित हैं। यह पात्र अति मुलायम मिट्टी व नियमित व नियंत्रित ताप में निर्मित हैं। फलस्वरूप पूरी सतह भूरे रंग की है। ये पात्र देखने में मुख्यतः काफी भारी व मजबूत हैं तथा धातु के खनक के समान ध्वनि प्रसारित करते हैं, जब उन पर प्रहार किया जाता है। बड़े-बड़े जार, कटोरे व छोटे घड़ों के आकार में ये पात्र देखने को मिलते हैं। इन पर चित्रकारी बहुत ही सावधानी से की गयी है। जार के ऊपरी हिस्से पर दो मोटे घेरे काले रंग में चित्रित हैं जिनके बीच त्रिकोण बने हुए हैं। इसके अतिरिक्त बाकी हिस्से पर आड़े-तिरछे नमूने चित्रित हैं। कटोरे समानान्तर रेखाओं में घेरे खिचे हैं व छोटे घड़े पर तीन पतले घेरे दिखाई देते हैं। ये घेरे, घड़े के ऊपरी हिस्से में ही बने हैं। उपरोक्त वर्णित विशेषता सिंधु-सभ्यता के पात्रों पर ही पाये जाते हैं।

दूसरे किस्म के जो पात्र मिलते हैं वह कुछ खुरदुरापन लिए हैं। उन पर किसी भी तरह का कोई लेप नहीं किया गया है। इनके लिए जो मिट्टी इस्तेमाल की गई है वह भुरभुरी, गोबर, घास अथवा रेत आदि का मिश्रण है। इन पात्रों के ठीकरों में जो कालापन देखने को मिलता है उससे लगता है ये आग में अच्छी तरह से पकाए नहीं गये। इन पात्रों पर गीलेपन में ही संभवतः सरकण्डे, चाकू अथवा कंघी आदि की सहायता से सादे चित्र अंकित किये गये है। जैसे कि हल्का घुमाव लिए समानान्तर रेखाएँ जो कि कहीं धारीदार पट्टियाँ व कहीं ऊपर से नीचे की ओर आती

पट्टियों से पता चलता है। इसके अतिरिक्त अंगुली के अग्रभाग के चिन्ह देखने को मिलते हैं।

हड़प्पा कालीन कुछ छिद्रित पात्र के टुकड़े भी संग्रहालय में प्रदर्शित किये गये हैं जिनका आकार सामान्यतः बेलनाकार होता था। इन पात्रों के सतह के नीचे भी एक छिद्र होता है। सम्भवतः ये फल आदि को रखने के लिए, हवादार पात्र के रूप में प्रयुक्त होते थे। पात्र के भीतर सफेद रंग के द्रव का परत (White Incrustation) प्रतीत होता है। विद्वानों के द्वारा इसके विविध प्रयोग बताये गये हैं यथा - लकड़ी का कोयला बनाने हेतु (Brazier), पनीर (Cheese) बनाने हेतु आदि। ये पात्र दौलतपुर I, मिताथल IB, सिस्वाल I (हरियाणा), रंगपुर, अहार, प्रकाश, जोखा तथा कनेवाल आदि स्थानों से प्राप्त हुए हैं।

भूरे मृदिकापात्र

ये अच्छे किस्म के भारी व मजबूत पात्र हैं। इनकी सामान्यतः भूरी सतह है। ये पात्र अच्छी मुलायम मिट्टी से तीव्र गति के चाक पर बनाए गये हैं, जिसके पश्चात सामान्य ताप में पकाया गया है। लेकिन कुछ पात्र निम्नस्तरीय मिट्टी से भी निर्मित हैं। ये पात्र सामान्यतः बड़े मटके, जार के आकार में हैं। कुछ ऐसे पात्रों के टुकड़े भी मिले हैं जिनमें सुराख बने हैं। परन्तु इनके आकार का अनुमान लगाना मुश्किल है। ये पात्र जो यहाँ प्रदर्शित हैं, हरियाणा राज्य से मिले हैं।

अंभ्रकमिश्रित मृदपात्र

कुछ मृदभाण्ड अभ्रकमिश्रित मिट्टी से (Micaceous Red ware) से बनाये गये हैं और ये काले रंग से चित्रित हैं। एक मृदिकापात्र जिसका कोई आकार नहीं है, पर चित्रित पर चित्रित एक मोटा घेरा, तीन पतले सफेद रंग घेरों से काटा गया है।

भूरे पात्र

कुछ Grey Ware के मृदिकापात्र भी यहाँ दर्शाए गए हैं। ये विभिन्न आकारों में हैं जैसे कि बड़े जार, घड़े, तश्तरी, पेंदीदार तश्तरी का एक हिस्सा और कटोरे आदि में देखने को मिलते हैं। मृदिकापात्रें के अलावा, मृण्मूर्तियाँ तथा पत्थर की वस्तुएँ मुख्य हैं।

मृण्मूर्तियों में केक्स (Cakes), डिस्क के आकार में पात्र, स्किन रबर (Skin rubbers), मनके, पहिये व चूड़ियाँ आदि शामिल हैं।

टेराकोटा केक्स (Terracotta Cakes) की संख्या चार है। Pottery discs विभिन्न आकार में हैं। संभवतः 'पिट्टो' नामक यह बच्चों द्वारा किसी खेल में प्रयोग की जाती थी। Pottery discs में आठ ही पूर्णतः साबुत नमूने हैं और सात टूटे हुए हैं।

दो Skin rubbers भी यहाँ प्रदर्शित हैं जिनमें एक तो टूटा हुआ है और एक साबुत है। इसके अतिरिक्त मृण्मूर्तियों के बने मनके प्रदर्शित हैं। दो नमूने पहियों के हैं जो अलग-अलग आकार में हैं। चूड़ियाँ भी दो प्रकार की देखने की मिलती हैं। एक तो Glazed लेप से बनाई गयी है जो तकनीकि रूप से Faience कहलाती हैं। तथा दूसरी Terracotta से। Faience Glazed लेप की चूड़ियों की संख्या १२ है और सभी टूटी हुई हैं। Terracotta चूड़ियों की संख्या ६ है तथा वे विभिन्न आकारों में हैं।

नसीरपुर के गैरिक मृदभाण्ड (१६०० ई० पू० से १२०० ई० पू०)

इस स्थान से सर्वेक्षण के दौरान गेरुए रंग के मृदिकापात्र प्रात्र हुए हैं। यह स्थान, तालुका मंगलौर (जिला हरिद्वार) में स्थित हैं। सन् १९५० में बी० बी० लाल ने दो ताम्र-निखात सम्बन्धित स्थलों (Copper-hoards Sites) पर प्रयोगात्मक उत्खनन किया। ये स्थान बसौली (जिला बदायूँ) तथा राजपुर-परसु (जिला-बिजनौर उ० प्र०) में हैं।

यहाँ उत्खनन के दौरान कुछ नए किस्म के मृदभाण्ड मिले, जिनका नाम गेरुये रंग के मृदभाण्ड रखा गया। यह मृदिकापात्र मध्यम दाने वाले (Medium grained) मिट्टी का बना हुआ व कम आग में तपाया गया था। उत्खनन से प्राप्त हुए मृदभाण्ड खराब दशा में तथा घसीटे हुए प्रतीत होते (Rolled) थे। मृदिकापात्र पर गैरिक रंग (ochre) का पतला लेप था जिसका रंग नारंगी-लाल से गहरे लाल तक मिलता है। ऐसे ही पात्र हस्तिनापुर से भी मिले हैं। इस उत्खनन से प्रेरित होकर उन्होंने गैरिक मृदभाण्ड संस्कृति से संबंधित ४० नये स्थलों का पता लगाया। इस पात्र परम्परा का प्रसार पंजाब से उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश तथा उत्तरी राजस्थान तक मिलता है। हरिद्वार में नसीरपुर एवं बहादराबाद से ये पात्र प्राप्त होते हैं। इन पात्र खण्डों को रगड़ने से गैरुआ रंग छूटता है और ये कमजोर हैं।

गैरुये रंग के मृदभाण्ड वाली संस्कृति का प्रारम्भ साधारणतया नदियों के किनारे पाया जाता है और इनसे संबंधित स्थल आकार में (200 x 200 मी०) बहुत छोटे हैं। टीलों की ऊँचाई कम है और बहुत से स्थानों जैसे बहादराबाद, बिसौली, राजपुर-परसु और सैफई में किसी टीले का कोई चिन्हमात्र भी नजर नहीं आता। पात्रों को बनाने में इस्तेमाल की गई मिट्टी काफी मुलायम है परन्तु समानरूप से आग में तपे हुए नहीं हैं। Fabric medium हैं तथा मटकों पर प्रायः लेप किया गया है। कहीं - कहीं मोटा लेप प्रयोग में लाया गया है। नसीरपुर से जो पात्र प्राप्त हुए हैं वे मुख्यतः घड़े, संग्रहण जग, घड़े के आधार आदि के आकार में हैं। कुछ पात्रों पर nail incised decoration (नाखून या किसी नुकीली वस्तु से की गई अलंकृत चित्रण) भी दर्शनीय है।

चित्रित भूरे पात्र (१२००-८०० ई०पू०)

एक अन्य पात्र परम्परा चित्रित घूसर मृदभाण्ड के अवशेष भी संग्रहीत हैं। जैसा कि नाम से विदित है ये धूसर या स्लेटी रंग के पात्र हैं जिन पर काले रंग से चित्रिण है। अहिच्छत्र (१६४०) के उत्खनन से सर्वप्रथम ज्ञात इन पात्रों और संस्कृति का काल १२०० ई० पू० ८०० ई० पू० माना जाता है, इन पर अंकित आकृतियों में संकेन्द्रित वृत्त, अर्धवृत्त, तिरछी रेखाओं और सामूहिक बिन्दूओं की प्रमुखता है। महाभारत से संबद्ध कई स्थानों पर इन पात्रों की एक विशेष प्रकार के कम तापमान के भट्टे में पकाया जाता था जिससे इनका रंग धूसर ही रहे। इनमें कटोरों पर जो चित्रकारी की गई है उसमें Concentric चक्र तिरछी धारियों से जुड़े हैं तथा एक काला घेरा पात्र के ऊपरी, भीतरी हिस्से पर चित्रित है।

अहार संस्कृति - राजस्थान (३५०० ई० पू० १६०० ई० पू०)

यह स्थान उदयपुर के निकट है। यहाँ पर श्री आर० सी० अग्रवाल ने उत्खनन किया था। इस उत्खनन के दौरान काले और लाल एवं सफेद चित्रित पात्र व Burnished लाल प्रकार के पात्र खण्डों के बारे में जानकारी मिलती है। ये मृदिकापात्र कटोरे व घड़े के विभिन्न आकारों में हैं। इन पर सामान्यतः समानान्तर काले घेरे चित्रित हैं।

कुन्दनपुर टीप (बिजनौर) की ताम्रपाषाणिक व ऐतिहासिक पात्र परम्परा

इस स्थान पर सर्वेक्षण के दौरान ताम्रपाषाणिक मृदभाण्ड (Chalcolithic Pottery) व ऐतिहासिक मृदभाण्ड (Historical Pottery) प्राप्त हुए हैं।

ताम्रपाषाणिक मृदभाण्डों में ऐसे पात्र मिलते हैं जिन पर गीली अवस्था में ही फूल, तने व कंघी आदि आकृतियों का अंकन किया गया है। सिर्फ एक पात्र जिसका कोई आकार नहीं है तथा भूरे रंग (Grey ware) का है।

ऐतिहासिक पात्रों में (Historical Pottery) खुरदरे लाल पात्र, चित्रित लाल पात्र, Burnished काले रंग का पात्र व मुस्लिम चमकदार पालिश के पात्र प्राप्त हुए हैं, जो चित्रित लाल मृदिकापात्र थे। वे सब मटके के आकार में थे। यद्यपि कुछ पात्र खराब हालत में भी हैं, इन पर काले रंग से चित्रकारी की गई है।

एक खूबसूरत मृदभाण्ड जो कि मध्यम आकार का जग है, अति शोभाजनक है। इसके अलावा संग्रहणपात्र,
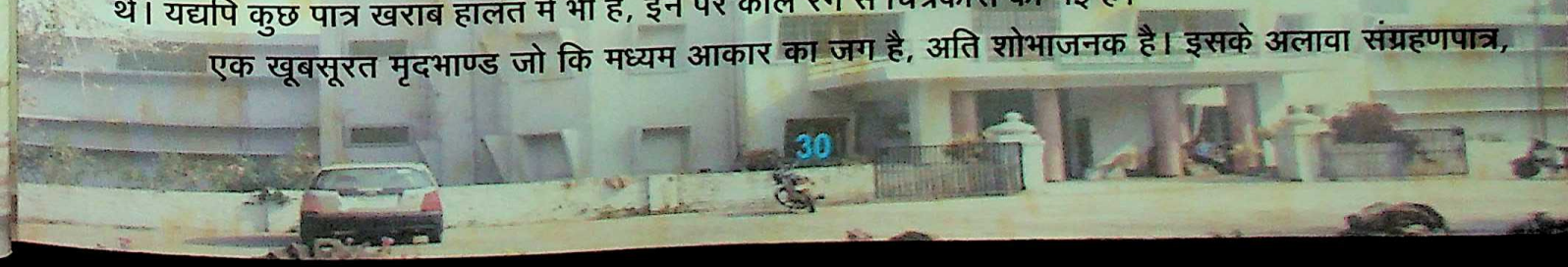
मटके, छोटे कटोरे तथा सम्भवतः मटके के ढक्कन तथा साथ ही एक बड़ा स्वास्तिक भी प्राप्त हुए हैं।

सरसावा (जिला सहानरपुर)

यह एक प्राचीन स्थल है जिसके सर्वेक्षण के दौरान एक प्राचीन टीला पाया गया, जो गाँव से लगभग ५० मीटर की दूरी पर, पश्चिम दिशा में स्थित है। टीले का फैलाव लगभग २ कि० मी० x १.५ कि० मी० तक है, जिसके बीच में एक कच्ची सड़क बनी हुई है। इसी कारण टीले का **Section** दृष्टिगत हुआ है। इस **Section** की ऊँचाई लगभग २.५ मीटर है। **Section** के निचले हिस्से से सादे भूरे **Grey** पात्र, चित्रित भूरे रंग के पात्र, काले व लाल पात्र **(Black and Red ware)**, (उत्तरी कृष्ण मार्जित मृदभाण्ड) **(Northern Black Polished ware)**, खुरदरे लाल पात्र, **Incised** लाल पात्र, **Burnished** लाल पात्र, चित्रित लाल पात्र तथा मुस्लिम चमकदार पालिश के पात्र प्राप्त हुए हैं जो मुख्यतः कटोरे, मटके, तश्तरी व ढक्कन आदि के आकारों में हैं। इसके अलावा कुछ मध्यकाल के मृदभाण्ड भी मिले हैं। उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा **Northern Black Polished Ware** सरसावा के अतिरिक्त गीरोड़ (रोहतक) हरियाणा से भी प्राप्त हुए हैं।

वीरभद्र (देहरादून) की पात्र परम्परा

इस स्थान से सर्वेक्षण के दौरान जो मृदिकापात्र प्राप्त हुए, उनमें सादे लाल पात्र व चित्रित लाल पात्र हैं, जो मटके, संग्रहणपात्र, डिश, पेचे पर डिश, **(Dish on stand)** पात्र-आधार, गहरे कटोरे, पात्रों के टूटे हत्थे, मटके के ढक्कन आदि आकार में हैं।

इन पात्र का निर्माणकाल **75 BC & 600 AD** के बीच माना गया है।

प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल

ये मृदिकापात्र विभिन्न प्रकार के हैं। जैसे - खुरदरे लाल पात्र, सादे लाल पात्र, चित्रित लाल पात्र, फूलदान, कटोरे, खूबसूरत छोटा मटका आदि आकार में है। जिन पर काले रंग से क्षैतिज रेखाएं बनी हैं। जिनके बीच में एक धारीदार रेखा बनी है।

मध्यकालीन मृदिकापात्र

यह मृदिकापात्र दो स्थानों से सर्वेक्षण के दौरान प्राप्त किये गये हैं। ये स्थान हैं- राखीगढ़ी (हिसार) व गिरोड़ (रोहतक) दोनों स्थान हरियाणा राज्य में हैं। इनमें अंकित लाल पात्र व मुस्लिम चमकदार पालिश किये पात्र मिले हैं।

गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का पुरातत्व संग्रहालय देखने का आज मौका मिला। संग्रहालय मनुष्य को अपने अतीत के साथ जुड़ाव देता है। इस संग्रहालय को देखकर मन प्रसन्न हुआ। स्वामी श्रद्धानन्द को समर्पित कक्ष एक महान भाव प्रेषित करता है। हिमालय का विविध रंगों में दर्शन हुआ। उसकी विराटता भव्यता और पवित्रता का इतना गहरा दर्शन पहली बार प्राप्त हुआ।

संग्रहालय के निदेशक और अन्य कर्मचारियों को बधाई और धन्यवाद।

10 अप्रैल 2004

प्रो0 अरूण निंगवेकर
अध्यक्ष, विश्वविद्यालय
अनुदान आयोग, नई दिल्ली

अस्त्र-शस्त्र कक्ष
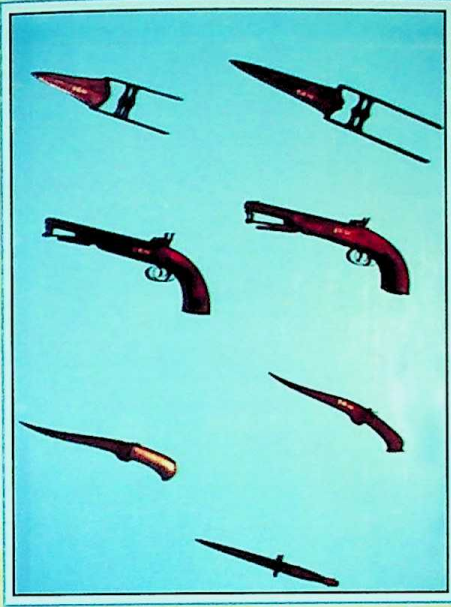
पिस्तोल एवं छुरिया आदि
18-19वीं शती ई0

प्रागैतिहासिक काल में जब मानव को अपने अस्तित्व का बोध हुआ, लगभग उसी समय से उसने अपने जीवन की रक्षा के लिए अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग विशेष रूप से शरीर पर प्रहार करने के लिये अथवा युद्ध या आखेट के समय अपना पराक्रम दिखलाने के प्रायोजन से किया गया है। भारतीय परम्परा और इतिहास के अनुसार धनुष-बाण, विविध प्रकार के भाले, गदा, तलवारें, चाकू, खंजर, फरसा, बंदूकें, तोपें, गोले, आदि अस्त्र-शस्त्रों के अन्तर्गत आते हैं। इनमें से बाण, गोले, छोटे भाले, अथवा तलवारों और चाकूओं का प्रयोग प्रक्षेपास्त्रों के रूप में और बड़े आकार के भालों अथवा कटारों जैसे नुकीले किनारे वाले अस्त्रों का प्रयोग आमने-सामने की लड़ाई में किया जाता था।

इन अस्त्र-शस्त्रों का उदगम प्रागैतिहासिक काल में ढूंढ़ा जा सकता है। पाषाण-काल में मानव के विविध हथियार और अन्य उपकरण पाषाणनिर्मित थे, जैसे :- हस्त-कुठार, विदारणी (क्लीवर), अस्त्राग्र, चन्द्रायुध, आदि जैसे आश्मिक उपकरण इसके प्रमाण हैं। जैसे-जैसे मानव ने विकास किया, उस के अस्त्र-शस्त्र उन्नतिशील होते गये। ताम्रकाल में तांबे के और ऐतिहासिक काल में जब लोहे का ज्ञान हुआ तो अस्त्र-शस्त्र लोहे के बनने लगे तथा इनकी गुणवत्ता में सुधार हुआ। मध्यकाल में बारूद के प्रचलन से युद्ध कला और अस्त्र-शस्त्र निर्माण कला में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। मध्यकाल में आग्नेय-शस्त्रों के साथ-साथ पारम्परिक अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण और प्रयोग भी प्रचलन में था। कालान्तर में विशेष रूप से सोलहवीं और अठारहवीं शताब्दी के दौरान भारतीय शिल्पकारों ने तोप और बंदूकों के निर्माण में विशेषज्ञता प्राप्त कर ली। अस्त्र-शस्त्र के सम्बन्ध में आज जो स्थिति है उस से सभी भलीभांति अवगत है।

अस्त्र-शस्त्रों के विकास की इसी कहानी को प्रतिबिंबित करती यह वीथिका है जिसमें प्राचीन काल में प्रयोग किये जाने वाले कुछ थोड़े से अस्त्र-शस्त्र को प्रदर्शित किया गया है। सबसे पहले धनुषों एवं विभिन्न प्रकार के बाणाग्रों को दिखाया गया है। अन्य वस्तुओं में धनुष-बाण, तलवार, ढाल तथा कवच का प्रदर्शन विवरणयोग्य है। युद्ध में बजने वाली तुराही एक विशेष आकर्षण का केन्द्र है। इनके अतिरिक्त द्वितीय विश्वयुद्ध के समय के कुछ बन्दूक आदि भी यहाँ पर रखे गये हैं। इसके अतिरिक्त फर्सा, त्रिशूल, कई प्रकार की तलवारें,जैसे :- छुरियाँ, कटारें, खुखरी, आदि का भी संग्रह है।

जजैल एवं स्टेनगन
17वीं - 18वीं शती ई0

आइने-अकबरी में वर्णित एक विशेष प्रकार की मध्यकालीन कटार जिसे 'जमधर' कहा जाता है, दर्शनीय है। इसका फलक द्विधारी है और अंग्रेजी के H आकार की इसकी मूठ प्रयोक्ता के हाथ की हिफाजत करती थी। इसके फलक पर भी चित्र बनाये जाते थे। इसके अतिरिक्त युद्ध के बिगुल, शिरोस्त्राण, ढाल और हाथों के कवच भी दर्शनीय हैं।

ऊँटों के पीठ पर रख कर चलाई जाने वाली १७वीं शताब्दी की एक बांस निर्मित बन्दूक जिसको ''जजैल'' कहा जाता था,

विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसमें १ फुट लम्बा लोहे का नुकीला स्टैण्ड लगा है। जिसे जमीन पर टिका कर जजैल को ऊपर नीचे दायें बायें घुमाया जा सकता था। कभी -कभी नाल का मुंह कुछ चौड़ा होता था तो उसे 'छोरदहन' कहा जाता था।

अस्त्र-शस्त्र वीथिका की एक झलक

१६वीं शताब्दी की टोपीदार बन्दूकों से लेकर आधुनिक हल्की मशीनगनों तक बन्दूकों का विकास प्रदर्शित करने वाला संग्रह भी दर्शनीय है। भारत में टोपीदार बन्दूकों का प्रचलन सर्वप्रथम १८२५ ई० में महाराजा रणजीत सिंह की सेना में प्रारम्भ हुआ। इसमें और पूर्व प्रचलित तोड़ीदार और चकमक बन्दूकों में मुख्य भेद यह था कि इसमें नाल के पिछले भाग में ऊपर उठे छेद पर बारूद युक्त टोपी रखी जाती थी जिस पर घोड़े द्वारा चोट होने से बन्दूक चल जाती थी। जबकि उनमें क्रमशः अग्नि फलीते और चकमक का प्रयोग बंदूक दागने के लिए किया जाता था। बन्दूकों के विकास की इसी श्रृंखला में कुछ परिष्कृत छोटी आकार की बन्दूकें, स्टेनगन, १८वीं शताब्दी की बड़ी और १६वीं शताब्दी की छोटी मशीनगनें तथा १६४० ई० की लाईट मशीन गन तथा लास एंजेल्स में बनी जी-१० हैंड-गन प्रदर्शित हैं।

इस वीथिका में कुछ पिस्तौलें भी प्रदर्शित हैं जिनका भारत में पहली बार प्रयोग १८वीं शती ई०में हुआ। आरम्भ में अपेक्षाकृत मंहगी एवं दुर्लभ होने के कारण इन्हें उच्चाधिकारी ही प्रयोग करते थे। ऐतिहासिक दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण संग्रह प्रथम विश्वयुद्ध (१६१४ ई०) में मद्रास तट पर जर्मन युद्धपोत एमडन द्वारा गोलाबारी में प्रयुक्त तोपें हैं।

अष्ट धातु प्रतिमा संग्रह वीथी

इस वीथिका में ब्राह्मण तथा बौद्ध धर्म से सम्बन्धित अष्टधातु की बनी धातु प्रतिमाओं के साथ विभिन्न प्रकार के पशु-पक्षियों के अष्टधातु के मूर्तियों को भी आधुनिक आकर्षक ढंग से प्रदर्शित किया गया है। बौद्ध प्रतिमाएं अधिकतर कुर्किहार जिला- गया, बिहार के हैं। इनमें भगवान बुद्ध को ध्यान तथा भूमि-स्पर्श मुद्रा में दर्शया गया है, जो कालक्रम में पूर्व-मध्यकालीन हैं। बौद्ध धर्म से सम्बद्ध मूर्तियों में बुद्ध की ध्यान मुद्रा, अभय मुद्रा, भूमि स्पर्श मुद्रा और बौद्धों की तान्त्रिक देवी प्रतिमा प्रमुख हैं। आधुनिक काल के ब्राह्मण धर्म से सम्बन्धित करीब ६२ प्रतिमाओं का भी संग्रह इस संग्रहालय में है जिसे मैसर्स विजय कम्पनी, दिल्ली ने भेंट-स्वरूप प्रदान किया है और दक्षिणी भारतीय कला की प्रतिनिधित्व करती हैं। हिन्दू धर्म से सम्बद्ध प्रतिमाओं में सेवक हनुमान, विष्णु, मकरवाहिणी गंगा, नरसिंह अवतार, भू-देवी, श्रीदेवी, पद्मपाणी लक्ष्मी इत्यादि सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त पूजा पात्र, शंख और पीठिका आदि भी दर्शनीय है।

श्री देवी
दक्षिण भारतीय कास्य कला
18वीं शती, उत्तरार्ध

पशु-पक्षी आकृतियों में जहाँ प्राकृतिक पशु-पक्षियों, बारहसिंहा, सिंह जिसकी पुष्ट मांसपेशियां स्पष्ट रूप से दिखती हैं, गाय-बछड़ा, गरूड़, मोर,
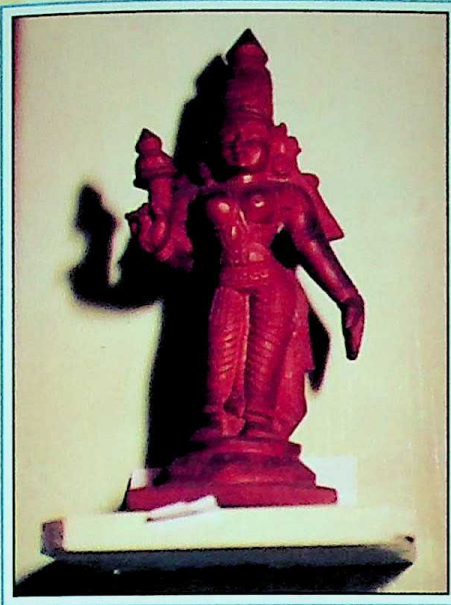
भू देवी दक्षिण भारतीय कास्य कला 18वीं शती, उत्तरार्ध

मयूरी, नन्दी, मुंह में मृग पकड़ें श्वान प्रतिमायें आकर्षक हैं। वहीं काल्पनिक पशुओं जैसे सपक्ष सिंह और सपक्ष अश्व आदि भी ध्यान आकर्षित करने में सक्षम हैं।

प्रस्तावित निर्माणाधीन उत्खनन एवं गंगा चित्र वीथी

पुरातात्त्विक अनुसंधान :

पुरातत्त्व संग्रहालय, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग के अंग रूप में ऐतिहासिक महत्त्व के अनेक स्थलों का पुरातात्त्विक अन्वेषण किया है, जैसेः हरिद्वार जिले में स्थित कुंडस्रोत, इमलीखेड़ा, सुल्तानपुर, अजमेरीपुर, पूरणपुर, लालढांग, नसीरपुर जिले में स्थित सरसावा एवं देहरादून जिले में स्थित गढ़ी-श्यामपुर तथा वहाँ से प्राप्त पुरावशेषों को संग्रहालय में प्रदर्शित किया गया है। उपरोक्त संस्था द्वारा हरिद्वार जिले में स्थित अजमेरीपुर नामक पुरास्थल का उत्खनन भी किया गया है तथा एक अन्य महत्त्वपूर्ण पुरास्थल गढ़ी-श्यामपुर जिला देहरादून, जहाँ से चित्रित धूसर मृदभांड संस्कृति से लेकर उत्तर मध्यकालीन संस्कृति का प्रमाण है, का उत्खनन प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग के तात्कालीन अध्यक्ष तथा संग्रहालय के निदेशक प्रो० श्यामनारायण सिंह के मार्गदर्शन में पुरातत्त्व संग्रहालय के क्यूरेटर श्री मनोज कुमार के निर्देशन में वर्ष २००३-०४ में शुरू किया गया। उपरोक्त उत्खनन का कार्य प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग के वर्तमान अध्यक्ष तथा संग्रहालय के निदेशक प्रो० राकेश शर्मा के मार्गदर्शन में तथा पुरातत्त्व संग्रहालय के क्यूरेटर श्री मनोज कुमार के निर्देशन में दो सत्रों यथा; २००४-०५ एवं २००५-०६ में किया गया तथा सत्र २००६-०७ में उपरोक्त उत्खनन का documentation का कार्य किया गया। जिससे अनेक प्रकार की महत्त्वपूर्ण पुरावशेषों यथाः कुनिन्दकालीन सिक्के, काश्मीर के राजाओं के सिक्के आदि की प्राप्ति हुई है। उपरोक्त उत्खनन में चित्रित धूसर मृदभांड संस्कृति (११०० ईसा पूर्व - ७०० ईसा पूर्व) से सम्बन्धित मृदभांड के टुकड़े भी मिले हैं, जो निःसन्देह प्राचीन काल के तीर्थ मार्ग पर प्रकाश डालती है। उत्खनन में कई शदी तक प्रयुक्त होने वाली फनाकार आकृति के पकी हुई ईंटों व सामान्य प्रकार के ईंटों से बने एक कुँऐ को भी प्रकाश में लाया गया है।

उपरोक्त स्थलों के अनवेषण व उत्खनन से ऊपरी गंगा घाटी की प्राचीन संस्कृतियों पर नया प्रकाश पड़ा है। अतः पतित पावनी गंगा का भारतीय कला में जो अंकन हुआ है और उपरोक्त वर्णित संस्कृति से सम्बन्धित पुरावशेषों व उनके छाया चित्रों को लेकर एक गंगा के सम्मान में वीथिका का निर्माण प्रस्तावित है। जो इस सत्र में बनकर दर्शकों के अवलोकनार्थ तैयार हो जाएगी। नदी के प्राचीन भारतीय साहित्य में देवी-देवताओं जैसा स्थान है जो उचित प्रतीत होता है क्योंकि नदी घाटी में ही सभ्यता वं संस्कृति का विकास होता है। उदाहरण स्वरूप ऊपरी गंगा घाटी में उपरोक्त वर्णित स्थलों का विकास को दर्शाया गया है उसी को ध्यान में रखते हुए गंगा व उसकी संस्कृति पर एक पृथक विथी का निर्माण चल रहा है।
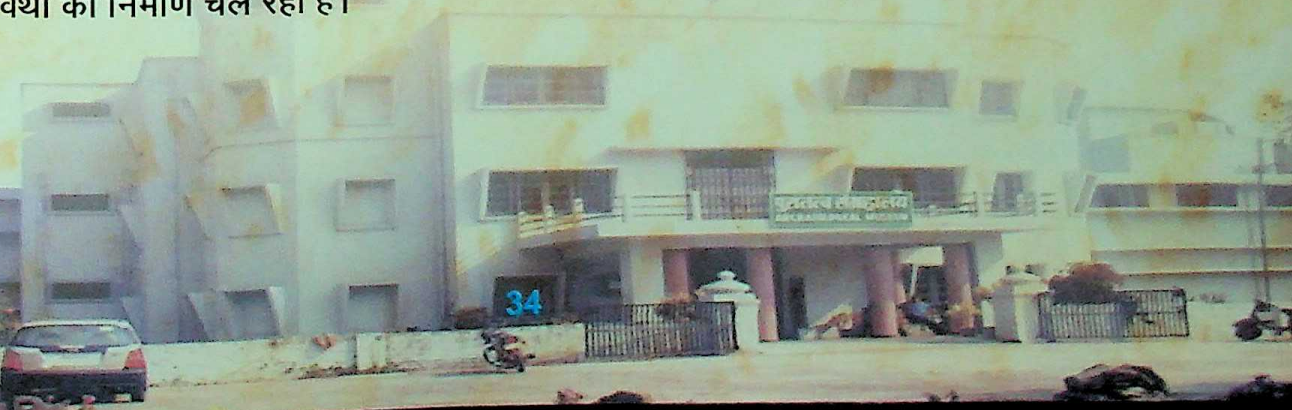
पुरातत्त्व संग्रहालय के विषय में कुछ विशिष्ट व्यक्तियों की सम्मतियां

गुरुकुल कांगड़ी संग्रहालय की स्थापना कल हुई। उसका उद्देश्य शिल्प, चित्र, प्राचीन मुद्रायें आदि के रूप में भारतीय इतिहास की सामग्री का संग्रह करना है। मैंने संग्रह देखा। थोड़े से समय में उत्साहवर्धक काम हुआ है। अच्छा संग्रहालय इतिहास के अध्ययन की सुन्दर प्रयोगशाला बनाई जा सकती है। संग्रहालय के पास अच्छा स्थान है। उसके कार्यकर्त्ताओं में लगन है। आशा है उसकी उचित उन्नति होगी। मैं उसका शुभ भविष्य चाहता हूँ।

04 मार्च 1950

-वासुदेवशरण अग्रवाल
राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली

इस संग्रहालय की विभिन्न प्रकार की वस्तुओं को मैनें बड़ी दिलचस्पी के साथ देखा। इस संग्रहालय की एक विशेषता स्थानीय प्राचीन वस्तुओं का संग्रह है। मैं संग्रहालय के अध्यक्ष को संग्रहीत वस्तुओं की उत्कृष्टता और वैविध्य पर बधाई देता हूँ।

15 मार्च 1957

-चिन्तामणी द्वारकानाथ देशमुख
अध्यक्ष विश्वविद्यालय अनुदान आयोग

गुरुकुल के संग्रहालय को देखकर मुझे खुशी हुई थी। अनेक प्रकार की वस्तुएं वहाँ जमा हैं और विद्यार्थियों को उनको देखकर लाभ होता होगा। मैं आशा करता हूँ कि संग्रहालय बढ़ेगा और उसकी उन्नति होगी।

31 अगस्त 1958

-पं0 जवाहर लाल नेहरू

गुरुकुल कांगड़ी संग्रहालय देखकर बहुत प्रसन्नता हुई। पुरातत्त्व का संग्रह विशेष रुचि और लगन से किया गया है। मेरी इच्छा है कि यह संग्रहालय उत्तरी-पश्चिमी उत्तर-प्रदेश आंचलिक (Regional) संग्रहालय के रूप में परिवर्तित और विकसित हो।

12 सितम्बर 1968

-कृष्णदेव
भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण, दिल्ली

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का पुरातत्त्व संग्रहालय दूसरी बार देखने का अवसर मिला। प्रसन्नता हुई। यह संग्रहालय अपने विकसित रूप में इस आंचल की आवश्यकताओं को पूर्ण कर सकता है।

-नी0 पु0 जोशी
निदेशक : राज्य संग्रहालय, लखनऊ

08 अक्टूबर 1968

आज गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय का पुरातत्व संग्रहालय देखने का सुअवसर प्राप्त हुआ। बहुत ही अच्छा संग्रह है मुझे नहीं मालूम, किसी दूसरे विश्वविद्यालय के पास ऐसा अच्छा संग्रह है। मुझे और मेरे साथियों को यहाँ आकर बहुत प्रसन्नाता हुई।

प्रो0 नर्मदेश्वर झा
कुलपति, बिहार विश्वविद्यालय
मुजफ्फरपुर, बिहार।

03 मई 1983

एक रोचक एवं महत्वपूर्ण संग्रह बहुत ही कल्पनाशील प्रदर्शन व्यवस्था में उन्नति के लिए राज्य तथा भारत सरकार दोनों की सहायता की अपेक्षा रखता है ताकि संग्रहालय का निरंतर विकास हो सके।

टी.एन. चतुर्वेदी
भूतपूर्व राज्यपाल, कर्नाटक

11 नवम्बर 2008

पुरातत्व संग्रहालय गुरुकुल कांगड़ी-विश्वविद्यालय देखने का अवसर प्राप्त हुआ। इस संग्रहालय का वैशिष्ट्य इसके अद्भुत संग्रहों के कारण है। शुभकामनाओं के साथ।

राजनाथ सिंह
पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष
भारतीय जनता पार्टी

09 अप्रैल 2010

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग

1. प्रो0 राकेश कुमार शर्मा	प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
2. डा0 प्रभात कुमार	एसोसिएट प्रोफेसर
3. डा0 देवेन्द्र कुमार गुप्ता	एसोसिएट प्रोफेसर
4. डा0 हिमांशु पंडित	असिस्टेंड प्रोफेसर (तदर्थ)
5. डा0 धर्मेन्द्र प्रसाद	असिस्टेंड प्रोफेसर (तदर्थ)

पुरातत्त्व संग्रहालय

1. प्रो0 राकेश कुमार शर्मा	निदेशक
2. श्री मनोज कुमार	संग्रहाध्यक्ष
3. डा0 दीपक घोष	संग्रहालय सहायक
4. श्री सत्येन्द्र सिंह	सहायक संग्रहाध्यक्ष
5. श्री राजपाल सिंह चौहान	सहायक (कार्यालय)
6. श्री दिनेश कुमार	गैलरी अटैन्डेन्ट
7. श्री विजय पाल सिंह	गैलरी अटैन्डेन्ट
8. श्री श्याम लाल	माली
9. श्री शिव कुमार मौर्य	गैलरी अटैन्डेन्ट (तदर्थ)
10. श्री सुरेन्द्र कुमार	सफाई कर्मी
11. श्री दिलीप कुमार श्री वास्तव	दैनिक वृत्ति भृत्य
12. श्री राजेन्द्र कुमार	दैनिक वृत्ति भृत्य

धर्मचक्रप्रवर्तन मुद्रा में बुद्ध
पूर्व-मध्यकालीन, कन्नौज

पद्मपाणि शिव प्रतिमा
पूर्व-मध्यकालीन, कांगड़ी ग्राम, हरिद्वार

गुरुकुल के प्रारम्भिक दिनों के महात्मा मुंशीराम जी और
भण्डारी शालीग्राम जी (1904 ई0)